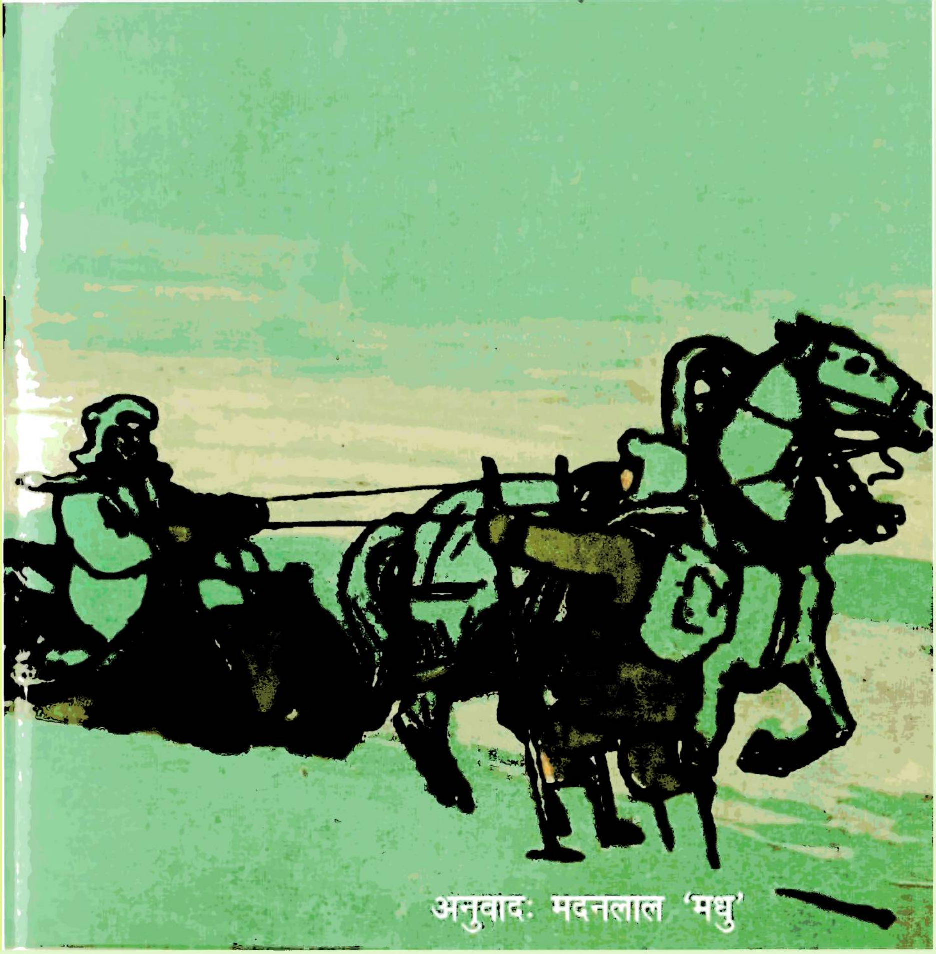

अनुवादः मदनलाल 'मधु'

येलेना उस्पेंस्काया

नगर का प्रथम शिशु

कामगार प्रकाशन

सोवियत लघुकथा पुस्तकमाला

येलेना उस्पेंस्काया

नगर
का
प्रथम शिशु

अनुवादक

मदनलाल 'मधु'

कामगार प्रकाशन

प्रथम कामगार संस्करण, अक्तूबर, 2022

प्रकाशक की ओर से

यह प्रकाशन ***नगर का प्रथम शिशु, येलेना उर्स्पेंस्काया,*** *विदेशी भाषा प्रकाशन गृह, मॉस्को द्वारा प्रकाशित का पुनर्मुद्रण है।*

साभार : विदेशी भाषा प्रकाशन गृह, मॉस्को

ISBN : 978-81-85242-72-9

मूल्य : 100 रुपये

प्रकाशक

बलराम शर्मा

कामगार प्रकाशन

बी-4838, गली नं. 112, संत नगर, बुराड़ी, दिल्ली-110084

Website : kamgarprakashan.com

E-mail : kamgarprakashan@gmail.com

मोबाइल : 9212504960

मुद्रक

कोमसर्विसेस, ए-73, वजीरपुर इंडस्ट्रियल एरिया, दिल्ली-110052

नगर का प्रथम शिशु

अल्योशा अचानक जाग उठा। कोने में रखा हुआ रीछ की खाल का कम्बल, सिरहाने पर टिका हुआ निकीता का काले बालों वाला सिर, पुस्तकों की अलमारी और कमरे में रखी हुई अन्य वस्तुएँ आज भी सदा की भाँति ही थीं। फिर भी उसे कमरा कुछ अजीब-अजीब-सा लगा। अल्योशा ने शीघ्र ही जान लिया कि कमरे का अजनबीपन, खाने के कमरे के अध-खुले दरवाज़े से प्रवेश करते हुए प्रकाश के कारण था। सभी ओर निस्तब्धता थी। केवल कभी-कभी भट्टी में जल रहे लट्ठों के चटकने की आवाज़ सुनाई देती थी। अल्योशा के पिता अपनी मेज़ पर काम कर रहे थे और वह उनकी विशाल परछाईं को दीवार पर हिलते हुए देख सकता था।

अल्योशा को माँ दिखाई न दी। किन्तु वह यह जानता था कि वह घर में ही है। उसने माँ की उपस्थिति का अनुमान पिता की शान्त मुद्रा और हिल-डुल की धीमी-धीमी आवाज़ से लगाया। आराम से लेटा हुआ अल्योशा, प्रकाश की किरण से प्राप्त होने वाली गर्मी का आनन्द ले रहा था। उसका हृदय उस आनन्द से गदगद था, जो छुट्टी की पूर्व-आशा से प्राप्त होता है। सम्भवतः आज वे क्रिसमस वृक्ष को सजाएँगे।

उसके पिता ने ठक से खुर्दबीन को मेज़ पर रख दिया और कहा "हूँ, हूँ।"

स्पष्ट था कि उनके बीच उस समय से कोई बातचीत चल रही थी जब अल्योशा सो रहा था। पिता अपने काम को छोड़ न पाए थे। अब

वे उठ कर खड़े हो गए और साथ ही उनकी परछाईं भी ऊपर की ओर उठ गई। ठक से पुस्तकों की अलमारी का ताला अलग हो गया और पिता ने उसमें अपने पत्थरों को रखना शुरू किया। अल्योशा उस अलमारी से भली भांति परिचित था। इस अलमारी में उसके पिता अपनी खोज की सर्वोत्तम वस्तुएँ, जिनपर कि एक भूतत्व-वेत्ता को गर्व हो सकता है, रखा करते थे। इन चीज़ों में कुछ अपेटाइत जिनकी हरियाली पर दानेदार चीनी की सी सफ़ेद झिल्ली आई हुई थी और नेफ़ेलीन के कुछ कोणदार नीले टुकड़े शामिल थे। ये वे पत्थर थे जिनके कारण उत्तरीय ध्रुव के वृत्त के परे उस नगर का जन्म हुआ था।

"अरे, तो तुम कहती हो कि वह गुस्ताख़ है?" पिता की आवाज़ फिर सुनाई दी।

"हाँ," माँ ने दुखी होते हुए कहा, "आप जानते हैं कि वह कुछ ऐसे ही ढंग से, बहुत लापरवाही से बातचीत करता है।"

अल्योशा के चेहरे की नसों में रक्त तेज़ी से दौड़ने लगा। वह सोचने लगा कि आज उसने माँ को क्या कह दिया था? "मैं तुम्हारी लकड़ियों के झमेलों में नहीं पड़ सकता। मुझे अपना भूगोल का पाठ याद करना है। वे मुझसे सब नदियों के नाम पूछेंगे..." किन्तु न तो उसने भूगोल में अच्छे अंक प्राप्त किये और न लकड़ियाँ ही चीरीं।

"उसकी उम्र ही ऐसी है," उसने पिता को कहते सुना, "वह अभी बच्चा ही तो है। ठीक हो जाएगा। माशा, मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि उसकी उम्र में मैं भी उसके जैसा ही था।"

बच्चा है! अल्योशा को लगा कि जैसे पिता ने उसके प्रति अन्याय किया है। क्या बात की है!

"तुम इन्हें बिगाड़ती हो, माशा," पिता कहते जा रहे थे, "वे तुम्हें गुस्ताख़ी करते हैं और तुम रात को देर तक उनके कपड़े इस्त्री करती रहती हो। आख़िर वे अपने आपको समझते क्या हैं, हँसों की जोड़ी?"

"क्या आप कल के लिए सभी वस्तुएँ ले आए हैं?" माँ ने अव्यग्र भाव से पूछा।

"हाँ, अरे तुमने मुझे कुछ शैम्पेन लाने को भी कहा था। वह तो मैं आज नहीं ला सका। मैंने सुना था कि कल स्टेशन पर कुछ शैम्पेन मिल सकेगी। मैं कल ले आऊँगा," पिता नाराज़ होते हुए भी विनम्र थे। उन्होंने आगे कहा, "तुम तो सुन तक नहीं रहीं। मैं एक गम्भीर विषय पर बातचीत कर रहा था और तुम उपहारों को ले बैठीं!"

अल्योशा उनकी बातचीत को अधिक अच्छी तरह सुनने के लिए बिस्तर में उठकर बैठ गया। पर वे दोनों अब चुप थे।

वह ग़ौर कर रहा था कि पिता ने क्या कुछ खरीदा होगा। सम्भवतः निकीता के लिए खरीदा गया उपहार, उसके उपहार से बढ़िया होगा। क्योंकि निकीता का उपहार केवल नए वर्ष के लिए ही नहीं होगा। कल वह सोलह वर्ष का हो जाएगा। कितना भाग्यशाली है निकीता... वह न केवल नए वर्ष के मौक़े पर ही —जोकि स्वयं ही बहुत अद्‌भुत बात है —पैदा हुआ था, बल्कि नगर में पैदा होने वाला पहला लड़का था। वह नगर का प्रथम शिशु था। जब वह किंडरगार्टन में ही था, तभी से उसे

इसी नाम से पुकारा जाता था। अल्योशा ने एक बार माँ से पूछा था, "और मैं, क्या मैं नगर का दूसरा लड़का हूँ?"

वह खिलखिलाकर हँसे बिना न रह सकी थी, "कमाल है, अरे एक वर्ष में तो नगर अनेकों नन्हे-नन्हे लड़कों से भर गया था। और अगर तुम को नगर का दूसरा शिशु माना जाए, तो वे कहाँ जाएँगे!"

"मैं जानती हूँ मुझे कुछ कठोर होना चाहिए," माँ ने एक अपराधी के से स्वर में कहा, "मुझे तुम से और लड़कों से नर्म न होना चाहिए। मैंने तुम सभी को बिगाड़ दिया है...पर मैं कठोर हो ही नहीं पाती। मुझे तुम सभी बहुत प्रिय हो।"

अल्योशा बिस्तर से उतरकर नीचे खड़ा हो गया। वह अभी खाने के कमरे में जाएगा और कहेगा, "माँ मुझे क्षमा कर दो..."

"विशेष कर उसके साथ तो मैं कठोर हो ही नहीं सकती," माँ कहती गई, "आप समझते हैं, न? बेचारा यतीम ही तो ठहरा, आख़िर! जब मैं नताशा का ध्यान करती हूँ और जिस ढंग से उसने कहा था 'लड़के का ख़्याल करना, इसे खुश रखना...' याद है? और क्या आपको वह भी याद है जब हम पहले पहल यहाँ आकर एक तम्बू में रहे थे? और वह रात जब उन्होंने दौड़ते हुए आकर बतलाया था कि कोल्या बर्फ़ के तूदों के नीचे दब गया है, याद है? नताशा अपने सिर पर एक कम्बल डालकर बर्फ़ के तूदों की ओर दौड़ पड़ी थी...और तब जब वे उसे वापस लाए? वह बर्फ़ से ढकी हुई थी। उसके हाथ कितने ठंडे थे। उसने मुंह से एक

शब्द भी नहीं निकाला...और जन्म के समय यह लड़का बिल्कुल ज़रा-सा था।"

अचानक अल्योशा ने महसूस किया कि उसके पैर ठंडे हो गये हैं और उसने उन्हें कम्बलों से ढँक दिया। उसका पलंग चरचराया। उसने अपने पिता के पैरों की आहट सुनी।

"क्या तुम उसे कल सब कुछ बता दोगी?" दरवाज़ा बन्द करते-करते उन्होंने पूछा।

अल्योशा माँ का उत्तर न सुन सका। उनका कमरा जिसे वे अब भी शिशु-गृह कहते थे, सदा की भाँति अब फिर अँधेरा-सा, धुंधला-धुंधला और शान्त हो गया। अल्योशा को कमरे के बाहर से पालतू भेड़िये 'टोमका' की ज़ंजीर की खनखनाहट सुनाई दी। वह खिड़की के पास जाकर खड़ा हो गया। तने हुए कानों वाला काला टोमका बर्फ़ की घनी परतों के बीच बैठा हुआ बहुत छोटा और उदास-सा दिखाई दे रहा था।

वहाँ बाहर ठंड है ... वह यह कैसे कहता? "माँ मुझे क्षमा कर दो..." और अब यह प्रकट हुआ कि उसकी माँ का नाम नताशा था और उसके पिता की मौत बर्फ़ के तूदों के नीचे दबकर हुई थी। तो उसके पिता निकोलाई तीम्चेंको थे। एक भूतत्व-वेत्ता, एक वीर। वह अपने पिता के चेहरे को भली-भांति पहचानता था। उसकी तस्वीरें स्कूल और नगर - क्लब की दीवारों पर लटकी हुई थीं। अल्योशा ने नताशा के चेहरे को स्मृति-पट पर उतारने का यत्न किया। उसने कई बार उसके छायाचित्र को देखा था, पर कभी भी ध्यान से जाँचा नहीं था। तो वह यतीम था।

एक गोद लिया हुआ बालक। जबकि निकीता, उनका अपना बेटा था। इसीलिए माँ, पिता से उसकी शिकायत कर रही थी, अल्योशा की। इसीलिए उन्होंने उसे रविवार के दिन सिनेमा ले जाने से इन्कार कर दिया था – बीजगणित में थोड़े-अंक प्राप्त करने का बहाना करके और इसीलिए उसे इधर-उधर निकम्मे कामों के लिए , यहाँ तक कि डाकख़ाने भी भेजा जाता था। तिसपर सदा यही सुनने को मिलता था – "निकीता बड़ा है। उसे घर पर करने के लिए जो काम मिला है, वह कठिन है..." और उसका अपना काम – आसान है, है तो?

अगली सुबह को जब अल्योशा खाने के कमरे में आया तो उसने एक लम्बा और सजा हुआ क्रिसमस वृक्ष, पहले से ही वहाँ खड़ा पाया। देवदार की नुकीली पत्तियों की सुगन्ध से सारा कमरा महका हुआ था। बत्ती जल रही थी और माँ खाने की मेज़ पर नाश्ता लगा रही थी।

"लड़को नाश्ता तैयार है," उन्होंने पुकारा और तेज़ी से रसोई की ओर लपका , क्योंकि वहाँ दूध उफ़न गया था। माँ केवल सन्ध्या के समय आराम करती थी। वह बहुत सुबह से काम में जुट कर सारा दिन व्यस्त रहती। सब से पहले वह मकान को बुहारती-झाड़ती फिर लकड़ियों के बाड़े की ओर जाती, इसके बाद कुएं की ओर, और तब बच्चों के साथ स्कूल। माँ स्कूल में अध्यापिका थी।

पिता अपनी मेज़ पर बैठे थे। उनका सिर स्कूल की एक पुस्तक पर झुका हुआ था। निकीता कुछ घबराया-सा पास ही खड़ा था। अल्योशा ने उनपर एक उड़ती हुई नज़र डाली। यदि किसी को घर पर करने के

लिए दिए गए काम में सहायता मिले, तो उसका अपनी श्रेणी में प्रथम आना तो स्वाभाविक ही है ! अल्योशा ने अपनी कुर्सी को ज़ोर से घसीट कर मेज़ के नीचे से निकाल लिया और नाश्ता करने लगा।

"तुम्हारा साहित्य का ज्ञान अभी बहुत पुख़्ता नहीं, प्यारे बच्चे! यह देखो यह फिर ग़लत है..." पिता ने अपने पाइप से कश खींचते हुए कुछ नाराज़ होकर कहा।

"जाओ, जाकर माँ की मदद करो," वे अल्योशा की ओर मुड़े, "तुम क्या अपने आपको मेहमान समझते हो?"

"मुझपर ही गुस्सा निकालना था ..." रसोई की ओर जाते हुए अल्योशा ने सोचा, "और उन्होंने ठीक कहा है, एक मेहमान ही तो है वह..."

वह समोवर (चाय बनाने का विशेष रूसी बर्तन) ले आया और फिर आकर बैठ गया। निकीता नाश्ता लेना शुरू कर चुका था। उसकी आँखें, पकाने के एक बर्तन के सहारे रखी हुई पुस्तक पर जमी हुई थीं।

"वह जो भी चाहे कर सकता है," अल्योशा के हृदय में दूसरा ईर्ष्यापूर्ण विचार पैदा हुआ।

"तुम जाकर थोड़ी-सी लकड़ी क्यों नहीं चीर देते?" पिता ने कहा।

उन्होंने अपने फ़र के लम्बे बूट को ऊपर की ओर खींचते हुए झुकी पलकों से अल्योशा की ओर देखा। घाव के कारण वे टाँग को झुका नहीं सकते थे। वे बूट पहनने की कोशिश करते हुए दर्द अनुभव कर रहे थे, जिसके कारण उनका चेहरा तन-सा गया था।

अल्योशा ने अवज्ञा का भाव दर्शाते हुए प्लेट को परे धकेल दिया।

वह जान-बूझकर बिना ओवर कोट पहने आँगन की ओर चला गया। जब वह लौट रहा था तो पिता बरामदे में दिखाई दिए।

"बिना ओवर कोट के इधर-उधर क्यों घूम रहे हो? कुछ अर्से से बीमार नहीं हुए, शायद इसीलिए, ठीक है न?" उन्होंने पूछा, "इधर तुम हो कि बेवकूफ़ी का प्रदर्शन कर रहे हो, और उधर तुम्हारी माँ को चिन्ताग्रस्त होकर कई-कई रातें जागते काटनी पड़ती हैं।"

लकड़ी के सब से ऊपर वाले खड़े हुए तने को ठोड़ी के नीचे दबाए, अल्योशा वहाँ ठहर गया। वह जान बूझकर एक ही बार में बहुत-सी लकड़ियाँ उठा लाया था ताकि देखने वालों को बोझ का एहसास हो।

उसने जवाब दिया – "निमोनिया होने पर आप मुझे अस्पताल भेज सकते हैं।"

पिता आग बबूला हो गए!

"सामने जवाब देते हो। मैं तुम्हें नए वर्ष के दिन ही बिस्तर पर डाल दूंगा। तुम्हें तभी अक्ल आएगी। तुम तो बिल्कुल हाथ से निकल गए हो।"

वे अल्योशा के पास से निकल गए और लंगड़ाते हुए नीचे की ओर उस मार्ग पर चल दिए जो गली को जाता था। उनका मकान ऊँचाई पर था।

अल्योशा ने गुस्से में आकर ज़ोर-ज़ोर से कुल्हाड़ा चलाना और लकड़ियाँ काटना शुरू किया। माँ ऊनी चादर लपेटते हुए दौड़ी हुई आई।

"जाओ, पहले जाकर कुछ खा लो, आलू ठंडे हुए जा रहे हैं," पिता के साथ मिलने के यत्न में एक युवती की भाँति नीचे की ओर मार्ग पर

तेज़ी से चलते हुए उसने कहा।

अल्योशा ने अकेले ही नाश्ता लिया। वह निश्चय कर चुका था कि अब अवश्य ही वहाँ से चला जाएगा। उसने फ़ैसला किया कि वह स्कूल जाएगा ताकि उन्हें उसके गुम होने का देर तक ख़्याल न आए। और वह अन्तिम पाठ के आरम्भ होने से पहले स्कूल से चला जाएगा। उसने अपने स्कूल के बस्ते में से अगले दिन के लिए रखी हुई पुस्तकें निकाल दीं और इनकी बजाय उसे नीचे पहनने की एक पोशाक, ख़ुराक और पैसे रखने के डिब्बे तथा डबल-रोटियों से भर दिया।

अब वह जाने के लिए पूरी तरह तैयार था। सोने के कमरे और शिशु-गृह के दरवाज़े, जिन से खाने के कमरे की ओर मार्ग जाता था, खुले हुए थे। कमरे खुले-खुले, खाली-खाली और एकदम नीरव थे। अब वह अपने साथ नताशा का – अपनी माँ का – छायाचित्र ले जाएगा। वह छायाचित्र सोने के कमरे की दीवार से लटक रहा था। पर अब वह वहाँ नहीं था। वह कब उतार लिया गया, अल्योशा देख न पाया था। जब वह क्रिसमस वृक्ष के पास से गुज़रा तो उसने नीचे की शाख़ा को छू दिया। वृक्ष थोड़ा हिला और मोतियों तथा सुनहरी चमकती चादर की पत्तियों के धुंधले मन्द प्रकाश में चमक उठा। धीमी-सी सरसराहट के साथ एक खिलौना 'धम' से उसके पैरों के समीप आ गिरा। यह बहुत पुराना खिलौना था – कपास के रुओं से बना हुआ छोटा-सा घोंसला और उसमें पीली चिड़ियाँ। यह खिलौना बहुत वर्षों से क्रिसमस वृक्ष में लटकाया जाता था। हर नए वर्ष के दिन, यहाँ तक कि अल्योशा के छुटपन

में भी, इसने बचपन की स्मृतियों को ताज़ा किया था। रसोई से ठंडे होते समोवर के धुएँ और जले दूध और बासी खाने की गन्ध आ रही थी। माँ ने अभी तक स्टोव नहीं जलाया था। वह दुकान से लौटकर शाम के लिए मीठी रोटियाँ पकाने वाली थी।

जब अल्योशा टोमका के पास से गुज़रा तो वह चिल्लाया और उसने ज़ंजीर को ज़ोर से खींचा। अल्योशा ने स्कीज़ पहने, दो छड़ियों के सहारे अपने को आगे को धकेला, और एक बार भी पीछे की ओर देखे बिना अपने मार्ग पर चल दिया। टोमका का चिल्लाना और ज़ंजीर की खनखनाहट धीरे-धीरे दूर होती गई।

* * *

अल्योशा ने निर्णय किया कि वह स्कूल से स्थानीय स्टेशन की ओर न जाकर, अगले स्टेशन से जो 12 किलोमीटर की दूरी पर था, लेनिनग्राद के लिए गाड़ी पकड़ेगा। स्थानीय स्टेशन पर परिचितों के मिलने की सम्भावना थी। वह उस सीमा तक जा पहुंचा, जहाँ नगर का अन्त होता था। वहाँ एक अधूरी छोड़ी हुई हवेली खड़ी थी। खिड़कियों से प्रवेश करती हुई चाँदनी उस हवेली में दूर तक फैली हुई थी। इस से सारी हवेली में उजाला हो गया था। अल्योशा ऐसे नगर में रहने का विचार कर रहा था जहाँ उत्तरीय ध्रुव वृत्त जैसी छः महीने की लम्बी रात न हो, और जो पहले से ही बन कर तैयार हो चुका हो। वह ऐसे नगरों के अस्तित्व की कल्पना भी बड़ी मुश्किल से ही कर सकता था। जहाँ तक उसे याद था, वह सदा ही हथौड़ों की ठक-ठक और स्थान साफ़ करने की मशीनों की गड़गड़ाहट

सुनता तथा लट्ठों व ईंटों के ढेरों और चूने से भरे बड़े-बड़े टबों को देखता आया था। गली में, सर्वप्रथम उन्ही का मकान बना था। जब अल्योशा ने स्कूल जाना शुरू किया उस समय उसका स्कूल लकड़ी की बनी एक छोटी-सी कुटिया में था। तो भी दूसरे वर्ष के समाप्त होते तक वह बड़ी-बड़ी खिड़कियों वाले एक नए मकान में बदल दिया गया था। अब वह किसी व्यावसायिक स्कूल में भर्ती होगा, जहाँ उसे पहनने को वर्दी भी मिलेगी। इस प्रकार वह पूरी तरह स्वावलम्बी होकर रहेगा।

अल्योशा नगर के छोर पर पहुँच चुका था। उसके सामने की ओर बर्फ़ से सफ़ेद , ठंडी और तेज़ हवाओं से झकझोरा हुआ विस्तृत भू-भाग था। इसके पीछे स्टेशन और स्टेशन के पीछे था बहु-जनसंख्यक विशाल नगर – लेनिनग्राद। नीचे ऊदे आकाश में पीले-पीले बड़े सितारे लटके हुए से दिख रहे थे। अब दिसम्बर के महीने में इन सितारों को दिन में भी देखा जा सकता था, पर रात्रि के समय में ये कहीं अधिक चमकदार हो जाते थे। जनवरी के आरम्भ होते ही वे बहुत दूर-दूर तक अदृश्य हो जाते, रात और दिन का अन्तर अधिक स्पष्ट हो जाता और सूर्योदय का दृश्य पहले से अधिक गहरा गुलाबी दिखलाई देने लगता था। अभी सूर्योदय नहीं हुआ था। लेकिन उसका पहाड़ों के पीछे से तप्त और तैरता हुआ प्रतिबिम्ब बर्फ़ से ढकी श्वेत ढलवानों को रंग बिरंगे मोतियों के समान रंगीन बना रहा था। प्रकाश, गर्मी और पहाड़ों का नींद से जागना, यह सभी कुछ अभी काफ़ी देर बाद होने वाला था। किन्तु उस समय तक तो उत्तरीय दिवस बहुत लम्बे-लम्बे तथा गोधूलि बेला की याद दिलाते हुए

से, मन्द प्रकाश वाले थे। अल्योशा उनसे डरता नहीं था। वह उन्हें प्यार करता था। वह गोधूलि के समय बर्फ़ पर घिसटते हुए स्कूल जाने और गर्मी देने वाली नीली खिड़कियों वाले मकान की ओर लौटने में बहुत आनन्द प्राप्त किया करता था। पर वह सब तो अब समाप्त हो चुका था।

कहीं दूर से कुछ गड़गड़ाहट और सीटी की आवाज़ सुनाई दी। पर यह सीटी इतनी हल्की थी कि इसकी तुलना इंजन की बजाय मनुष्य की आवाज़ से की जा सकती थी। अल्योशा इसे सुनने के लिए रुक गया, लेकिन गाड़ी की गड़गड़ाहट एक दूसरी ही आवाज़ में डूब गई। एक आवाज़ आई "एक तरफ़ हो जाओ!" अल्योशा ने आवाज़ को पहचाना। उसके मन में अपने प्रति घृणा का भाव पैदा हुआ कि वह किसी अन्तःप्रेरणा से सहसा ही चिल्ला उठा –

"पिता जी!"

तभी एक सफ़ेद और बड़ी बरौनी वाला घोड़ा उसके सिर पर रुक कर जम-सा गया। घोड़े का सिर, कसी हुई लगामों के कारण पीछे को खिंचा हुआ था। अल्योशा ने तत्काल ही उसे पहचान लिया। वह बर्फ़ जैसा श्वेत और छोटे क़द का 'मेतेलित्सा' था। नगर के घोड़ों में उसका गर्वपूर्ण स्थान था। पिता बर्फ़ में चलने वाली गाड़ी में आधे उठकर खड़े हुए थे और उनके सभी ओर काफ़ी परिमाण में बर्फ़ पड़ी हुई थी।

"तुम यहाँ कैसे आए?" उन्होंने उद्विग्न होते हुए पूछा।

अल्योशा जवाब में कुछ बुड़बुड़ाया। वह बिल्कुल घबरा गया था।

"चलो, आओ बैठ जाओ, बाक़ी बातें घर पर होंगी।"

अल्योशा ने चुपचाप स्कीज़ को खोल कर गाड़ी में रख दिया और पिता के आगे जा बैठा।

"मैंने तुम्हें डाँटा था, इसीलिए तुमने माँ की छुट्टी बरबाद करने का फ़ैसला कर लिया, ठीक है न? सैर के लिए भी तुमने खूब अच्छा समय चुना है!"

पिता के लहजे से उनकी विक्षुब्धता का अनुमान लगाया जा सकता था।

अल्योशा के पास कहने के लिए कुछ न था। पिता ने घोड़े की लगाम कुछ ढीली छोड़ दी। 'मेतेलित्सा' कुछ देर व्यग्रता से छटपटाया। इसके बाद उसने अपना सिर झुकाया और तेज़ी से चल दिया।

बर्फ़ से ढका हुआ विस्तृत क्षेत्र तेज़ी से पीछे छूटने लगा। कहीं दूर, बहुत दूर से गाड़ी की सीटी सुनाई दी।

"क्या तुम्हें ठंड लग रही है?" पिता ने तेज़ हवा की सायँ-सायँ को चीरते हुए ऊँचे स्वर में पूछा, "मेरे बेटे, मैं थोड़ी-सी शैम्पेन ले लाया हूँ।"

पिता ने अपनी बाँह अल्योशा के गिर्द डाल दी ताकि उसे कुछ गर्मी मिल सके।

चाँदनी से जगमगाती हुई अधूरी हवेली तेज़ी से गुज़र गई। अब शहर शुरू हो चुका था। सामने की ओर काले-काले पहाड़ों में खानों की बत्तियों की एक लम्बी शृंखला-सी टिमटिमा रही थी और दूर तक छोटे-बड़े मकानों की लम्बी पाँति फैली हुई थी। मकान की खिड़कियों तक जमी हुई बर्फ़

चमचमा रही थी। कुछ मकानों में उतावले बच्चे समय से पूर्व ही क्रिसमस वृक्ष की मोमबत्तियाँ भी जलाने लगे थे।

जो रास्ता उनके मकान की ओर जाता था, वहाँ आकर 'मेतेलित्सा' रुक गया।

"इन्हें भीतर ले जाओ," पिता ने अल्योशा को दो बड़ी-बड़ी बोतलें पकड़ाते हुए कहा, "देखना, कहीं इन्हें तोड़ न देना!" अल्योशा को ऊपर की ओर कठिनाई से चढ़ते हुए देखकर पिता ने पीछे से पुकारा। वह बड़े भद्दे ढंग से एक बग़ल में स्कीज़ दबाए हुए, और दोनों हाथों में एक-एक बोतल पकड़े था।

घर में सभी बत्तियाँ जली हुई थीं, पर क्रिसमस वृक्ष की मोमबत्तियाँ अभी तक नहीं जलाई गई थीं। क्रिसमस वृक्ष पर मोमबत्तियाँ जलाने का काम सदा से ही एक निश्चित समय पर विधिपूर्वक किया जाता था। उस समय, बचपन की भाँति आज भी लड़कों को शिशु-गृह में बन्द कर दिया जाता था।

दरवाज़ा अध-खुला था। अल्योशा तत्काल ही मन्द उष्णता और पकवान की मन-भावनी सुगंधि में खो-सा गया। मां ने रसोई के दरवाज़े से बाहर की ओर झाँका।

"मैं यही सोच रही थी कि तुम्हारे पिता तुम्हें अपने साथ ही ले गए हैं। क्या शैम्पेन मिली?" और तभी उसने भारी और ठंडी बोतलें अल्योशा से ले लीं। माँ के स्वर में किसी प्रकार की उत्तेजना न थी, लेकिन तब भी अल्योशा यह ताड़ गया कि उसका मन किसी कारणवश परेशान था।

उसी समय स्टोव से शी-शी की आवाज़ सुनाई दी और माँ रास्ते में पड़ी मेज़ पर बोतलें रखकर जल्दी से उसकी ओर चली गई। छुट्टी का दिन होने के कारण टोमका घर के भीतर ही था और वह स्टोव के समीप अपना लम्बा और काला शरीर फैला कर लेटा हुआ था। निकीता खाने के कमरे में मेज पर क्रम से वस्तुएँ सजा रहा था। वह खाने की मेज़ कुछ इस अन्दाज़ से लगा रहा था कि मानो वह बहुत समय से इसी में व्यस्त हो।

"तुम कहाँ चले गये थे?" अपना सिर ऊपर उठाते हुए उसने अल्योशा से पूछा, "माँ चिन्ता कर रही थी।"

अल्योशा को यह देखकर हैरानी हुई कि निकीता भी चिन्तित था और उसकी आँखों में सन्देह की झलक थी। यह बहुत अजीब बात थी। अल्योशा ने निकीता को कभी रोते नहीं देखा था। उसने खुशी-खुशी अपना स्कूल का भारी बस्ता कंधे से उतार कर एक भारी सन्दूक़ के पीछे छिपा दिया। कमरा खासा गर्म था।

"लड़को, शिशु-गृह में चले जाओ," माँ ने ऊँचे स्वर में कहा। वह अपने सोने के कमरे से जगमग करता हुआ चमकीला काला गाऊन पहने हुए निकली और उसने भेदभरे तथा प्रसन्न भाव से जैसे कि उन्होंने दस, बारह और पाँच वर्ष पूर्व किया था, कहा –

"एक मिनट के लिए अपने कमरे में चले जाओ। अभी एक ख़ास बात होने वाली है।" उन्होंने अपना हाथ हिलाया, तो रुमाल भूमि पर गिर गया। अल्योशा को यह देख कर बड़ी हैरानी हुई कि निकीता ने बिल्कुल नए और विनम्र भाव से तथा एक प्रौढ़ की भाँति उसे उठाकर माँ को

लौटा दिया। खाने के कमरे का दरवाज़ा बन्द हो गया। लड़के अपने अंधेरे शिशु-गृह में ही ठहरे रहे, उन्हें पिता की फुसफुसाहट और क्रिसमस वृक्ष पर लगाई गई घंटियों की टन-टन की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी। कुछ क्षण बाद की निस्तब्धता में अल्योशा ने एक नई तथा असाधारण आवाज़ सुनी। वह घड़ी की टिक-टिक थी।

"तुम्हें घड़ी मिली है, है न?" उसने फिर से पैदा होने वाली ईर्ष्या की भावना को दबाने का यत्न करते हुए पूछा।

निकीता समीप आ गया।

"अल्योशा, सुनो, आज मैंने एक बहुत महत्वपूर्ण बात जान ली है। यह घड़ी मेरे पिता निकोलाई तीम्चेंको की थी। मेरे माँ-बाप दूसरे थे.. नताशा और कोल्या, समझे न? हाँ, मैं उनका लड़का हूँ। अब मेरे पास उनके फ़ोटो हैं।" और उसने अपने बिस्तर के ऊपर दीवार से लटके हुए दो छायाचित्रों की ओर संकेत किया। प्रेम से अल्योशा के हाथ को अपने बड़े हाथ में लेते हुए निकीता ने कहा, "मेरी माँ की अन्तिम इच्छा थी कि यह भेद मेरी सोलहवीं वर्षगाँठ के अवसर पर खोला जाये और तभी मुझे पिता जी की यह घड़ी उपहार में दी जाये।"

"लड़को, तैयार हो जाओ!" खाने के कमरे का दरवाज़ा चौपट खोल दिया गया। दहलीज़ में पतली-दुबली और कोमल बालों वाली माँ क्रिसमस वृक्ष की बत्तियों के काँपते हुए प्रकाश में एक रेखा चित्र-सी लग रही थी।

"माँ बुला रही है," निकीता ने कहा और अल्योशा को हाथ से पकड़ कर खींचते हुए उस तरफ़ चला गया।

पिता

प्योतर सेर्गेयेविच द्वार पर आकर रुक गया। उसे लगभग यह विश्वास था कि यह वही दरवाज़ा है, यद्यपि सीढ़ियाँ अनजानी-सी लगीं। क्या वह भीतर चला जाए? वह बहुत अकेला-अकेला और उदास जैसा अनुभव कर रहा था। उसने कभी इस बात की कल्पना तक न की थी कि मास्को भी उसके लिए इतना सूना हो सकता है। शहर की आबादी बढ़ गई थी और वह अधिक सुन्दर तथा नया-नया लगता था। अनेकों स्मृतियाँ इस नगर से सम्बन्धित थीं जिन के कारण, उसे वह आज भी उतना ही प्रिय था, जितना कि कुछ वर्ष पहले।

किन्तु उन बीते दिनों में जबकि वह विद्यार्थी था, यूनिवर्सिटी के लम्बे-लम्बे दालानों में सुपरिचित गुंजन और लेनिन पुस्तकालय में बिजली के लैम्पों के हरे शेडों द्वारा उत्पन्न किया गया सुखद और शान्त वातावरण भी होता था। वह भी मास्को था। और वह भी मास्को था, उसे याद आया, जब उसका होस्टल का पड़ोसी सेम्योन धीरे-धीरे शब्दों को बुड़बुड़ाता रात-रात-भर पढ़ा करता था। वह देर तक पढ़ने के लिए टार्च की रोशनी का प्रयोग करता था ताकि उसके साथियों की नींद में विघ्न न पड़े। और वाल्या... हाल कमरे में तेज़ी से बढ़ते हुए उसके क़दम और कैसे वह सभी काम छोड़ कर चीख़ उठती थी "तुम!" कितना सुखकर और आश्चर्यपूर्ण भाव होता था उसकी उत्तेजित वाणी में। जैसे कि वह वहाँ अप्रत्याशित ही पहुंच गया था और जैसे कि उसने उसकी प्रतीक्षा करते हुए खिड़की

में खड़े-खड़े कई पहर नहीं बिताए थे।

और फिर मास्को कितना भिन्न हो गया था... युद्ध के दिनों का मास्को। वह सभी कुछ दोहराने को मन नहीं होता। रंग-बिरंगी और आनन्द सूचक खिड़कियों से विहीन मास्को, जिसे रात्रि के समय टैंकों की गड़गड़ाहट व्यथित करती रहती थी। और तब युद्धा-अक्षेत्र की ओर आगे को बढ़ते हुए उसके लिए मास्को का पड़ाव अत्यधिक वांछित और घर के समान मधुर था। मास्को के अतिरिक्त वह किसी दूसरी जगह को अपना घर नहीं समझ पाता था। उस समय वह सही अर्थों में मास्को-निवासी था। और अब ... अब वह था एक राह चलता मुसाफ़िर। फिर भी वह चाहता था कि कोई उसे मिले, उसका स्वागत करे, उसे लेनिन पहाड़ी की ओर ले जाकर नई यूनिवर्सिटी दिखाए। कोई उसे यह कहे कि मास्को कितना सुन्दर, गुंजान और आरामदेह हो गया है। उसे ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो उसके साथ-साथ चले, छोटी-छोटी गलियों में घूमे, चौरस्तों में टहले और स्मृतियों से भरपूर मुस्कान मुस्कराए। उसके कान ऐसी बातचीत सुनने को उत्सुक थे जिसका कोई वाक्य इन शब्दों से शुरू होता हो "तुम्हें याद है?" उसे ऐसी औरत की ज़रूरत थी जो उसे दहलीज़ में खड़े देख, सभी काम-काज छोड़, चौपट खुले दरवाज़ों में से अपने नन्हे-नन्हे क़दमों को तेज़ी से बढ़ाती हुई उसकी ओर आए।

किन्तु अब उसकी प्रतीक्षा करने वाला मास्को में कोई नहीं था, सेम्योन को इस नगर को छोड़े काफ़ी समय हो चुका था।

सहसा उसे वाल्या की याद आई। उसके मन में दो वर्ष-पूर्व की स्मृतियाँ

अभी भी ताज़ा थीं, यद्यपि वह बहुत पुरानी बात हो चुकी थी जब वे मिला करते थे। उसके साथ रहने में उसे सदा आनन्द और आराम मिला था। तब वह रात आई जिसकी याद उसे सदा ही अरुचिकर लगती थी। वे दोनों वाल्या के कमरे में थे। वह खिड़की के पास आराम-कुर्सी पर बैठा हुआ था, जबकि वाल्या खिड़की में पलथी मार कर बैठी हुई थी। पानी का बरसना उसी समय ही बन्द हुआ था और वातावरण में दबी हुई सीली मिट्टी तथा पोप्लार वृक्ष के पत्तों की गन्ध फैली हुई थी। पोप्लार का एक वृक्ष, खिड़की से बिल्कुल सटकर खड़ा हुआ था। जब वाल्या छोटी-सी थी तब उसके पिता ने इस वृक्ष को लगाया था और वाल्या इसे मज़ाक़ में अपना छोटा भाई कहा करती थी। वह एक टहनी तोड़ने के लिए खिड़की में आगे की ओर झुकी। किन्तु उसे पकड़ न सकी। वह और आगे की ओर झुक गई। वह कूद कर ऊपर जा पहुँचा और उसे कंधों से पकड़ कर पीछे की ओर खींच लिया। उसने यत्नपूर्वक एक टहनी को पकड़ लिया था किन्तु वह छूट गई और उसके हाथों में मुट्ठी भर गीले पत्ते ही रह गए थे।

"यह क्या बचपना है," वह डाँटते हुए मुस्कराया "तुमने तो अपनी हत्या कर डाली होती।"

"बचपना? यही कहा न तुमने?" वाल्या ने जवाब दिया और खिड़की की ओर सरक गई। सहसा उसने कहा – "पेत्या, मैं पूछती हूँ पेत्या, क्या तुम चाहोगे कि हमारा कोई बच्चा हो? तुम क्या चाहते हो? लड़का या लड़की?"

"तीन लड़के और तीन लड़कियाँ," उसने मज़ाक़ करते हुए जवाब दिया।

"मज़ाक़ छोड़ो, मैं सचमुच यह जानना चाहती हूँ," वह खिड़की से बाहर की ओर झाँकती रही।

वह पीछे की ओर हटकर, फिर से आराम-कुर्सी पर जा बैठा। न जाने इसे मेरा अच्छा मूड बिगाड़ने की क्या सूझी है?

और अपनी नाराज़गी को बिन-छिपाये अथवा छिपाने का यत्न किए बिना ही उसने साफ़-साफ़ कहना शुरू कर दिया कि इस प्रकार की बातचीत को वह क्यों अनावश्यक समझता था। उसने घुमावदार और दलील से भर-पूर वाक्यों में उसे विस्तारपूर्वक बताया कि अभी वह यूनिवर्सिटी का स्नातक नहीं हुआ था। वह नहीं जानता था कि भविष्य में उसे क्या करना होगा। और वह उस समय तक अपने को विवाहित जीवन के अयोग्य समझता था जब तक कि उसमें परिवार का भरण-पोषण करने की क्षमता न आ जाए।

उसने चटखारे ले लेकर भाषण दिया, क्योंकि उसे भाषण देने का शौक़ था। पर वह तत्काल ही आश्चर्यचकित हो गया जब सहसा वाल्या ने धीमी आवाज़ में कहा – "अभी, इसी क्षण यहाँ से चले जाओ।"

उसने वाल्या को प्यार से छूते हुए मज़ाक़ किया। पर वह चुप रही और लगातार पोप्लार वृक्ष की ओर ताकती रही जोकि उस समय तक अंधकार में लिपटकर स्याह हो चुका था। वह नाराज़ होकर चला गया।

वाल्या उसे काफ़ी प्रिय थी। किन्तु कभी-कभी उसे लगता था कि

उसके प्रति उसका अनुराग वास्तविक नहीं था। वह सोचता कि कहीं, किसी दूसरी जगह, उसे पूरी तरह अपने में समो लेने वाला प्यार, उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। और इसी प्रतीक्षा में वह वाल्या को घुटे घुटेपन और तंग दिली से प्यार करता। वह अपने भाग्य को उसे वचन देकर, अथवा प्रतिज्ञा करके बाँध देने से डरता था। किसी अज्ञात कारणवश वह यह मानता था कि किसी नारी से घनिष्ठ सम्बन्ध होने से एक पुरुष उतना अधिक नहीं बंधता जितना कि वचन देकर। वाल्या का उससे उन्मुक्त और खुले तौर पर प्यार करना उसे शुरू में अखरा भी था। किन्तु वाल्या को अधिक अच्छी तरह पहचानने पर उसे यह स्पष्ट हो गया कि वह उसकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के मार्ग में बाधक न बनेगी और उसकी इस विशेषता को वह सब से अधिक महत्व देता था।

बच्चों के बारे में जो बातचीत हुई थी, उससे उसे दुख हुआ। क्योंकि वास्तव में केवल बच्चे ही नहीं, बल्कि इस प्रश्न का उनके सम्पूर्ण आपसी सम्बन्धों से ताल्लुक़ था। वह खुश था, कि उसने सभी कुछ साफ़-साफ़ कह दिया था और अपने को किसी प्रकार वचनबद्ध नहीं किया था। वाल्या सब कुछ समझ जाएगी। वह उसकी ईमानदारी की सराहना करेगी। और इस प्रकार सभी कुछ पहले की भाँति साधारण ढंग से चलता रहेगा।

अगले दिन यूनिवर्सिटी से लौटने पर उसने अपने सिरहाने रखी हुई मेज़ पर एक पुर्ज़ा पड़ा पाया, जिसमें लिखा था – "मैं तुम से फिर कभी मिलना नहीं चाहती।" इससे उसकी भावना को भारी धक्का लगा। तो भी, कुछ देर बाद उसने वाल्या को एक पत्र लिखा, और फिर दूसरा।

पर कोई जवाब न आया। और तब युद्ध आरम्भ हो गया।

और अब, बीती हुई सभी बातों को याद करने के बाद वह जानता था कि उसे वाल्या से मिलने नहीं जाना चाहिये। पर वह बहुत अकेला अनुभव कर रहा था। उसने अपने आपको यह आश्वासन दिया कि वाल्या कभी की उन सब बातों को भूल, विवाह कर चुकी होगी और अब वे केवल दो पुराने और भले मित्रों की भाँति पुनः मिलेंगे।

वाल्या के पड़ोसी ने मुख्य द्वार खोला। वह पहले की भाँति ही था —पतला-दुबला और बदमिज़ाज। और तत्काल ही प्योतर सेर्गेयेविच को इस पड़ोसी से लगने वाले उस पुराने डर की याद आ गई जो उसे तब अनुभव होता था, जब वह वाल्या से मिलने आया करता था। अलबत्ता पड़ोसी ने उसे पहचाना नहीं और यह पूछे जाने पर कि "क्या वलेंतीना अलेक्सान्द्रोवना घर पर है।" उसने चुपचाप वाल्या के घर की ओर संकेत कर दिया।

वाल्या अपने कमरे में नहीं थी। एक लड़का अपना नीचे का होंठ दाँतों तले दबाए और सिर को एक तरफ़ झुकाये बड़े यत्न से मेज़ पर बैठा कुछ लिख रहा था।

"माँ शीघ्र ही लौट आएगी, आप बैठ जाइए," लड़के ने कहा और बहुत ध्यान से क़लम को स्याही में डुबो दिया।

प्योतर सेर्गेयेविच उस बच्चे की गम्भीरता पर मुस्कराये बिना न रह सका। लड़के ने जो उत्सुकतापूर्ण और टेढ़ी दृष्टि प्योतर सेर्गेयेविच पर डाली उससे उसने अनुमान लगाया कि वह उसे सिर से पैर तक ग़ौर

से देखना चाहता था, किन्तु डरता था कि कहीं उसका पृष्ठ नष्ट न हो जाए, जिसे लिखने में उसने बड़ी मेहनत की थी।

युद्ध से पहले प्योतर सेर्गेयेविच को बच्चों में कोई दिलचस्पी न थी। लड़ाई के दौरान में ही उसका ध्यान उनकी ओर गया। तभी उसने उन्हें मृत, घायल, सहमे हुए और यतीम बनते देखा। उसके जीवन में पहले पहल बच्चों के लिए दया तथा दर्द की भावना तभी जागृत हुई।

इस लड़के ने उसके मन में बिल्कुल नई और भिन्न प्रकार की भावना को जन्म दिया। जब प्योतर सेर्गेयेविच ने उसे देखा, तो ऐसा लगा मानो उसका मन बहुत समय से अब तक, युद्ध के दिनों में तथा युद्ध के बाद सेना में बिताए गए कई वर्षों में, मास्को में आकर एक शान्त, स्वस्थ बालक को प्रकाशपूर्ण कमरे में अपना घर का काम करते हुए देखने को, अधीर रहा था। वह अपने मन पर कड़ा संयम करके इस बात की प्रतीक्षा करने लगा कि कब उसका लिखना समाप्त हो और कब वह उस से बातचीत करे।

आख़िर पूर्णविराम आया। लड़के ने अपनी लेखनी एक ओर रखकर आगन्तुक पर उद्देश्यपूर्ण तथा प्रशंसात्मक दृष्टि डाली।

"तुम्हारी क्या उम्र है?" प्योतर सेर्गेयेविच ने पूछा।

"लगभग बारह बरस।"

प्योतर सेर्गेयेविच ने अपने दिल को ज़ोर से धक-धक करते हुए अनुभव किया। कुर्सी में पीछे की ओर लेटते हुए, वह लड़के की तरफ़ एक टक देखने लगा।

उसने पहले से ही इस बात की कल्पना की थी। हाँ उसने कल्पना की थी।

युद्ध-क्षेत्र की निकटवर्ती खन्दकों में विराम के समय सैनिकों की आम बातचीत का विषय बीवी-बच्चे रहता है। एक बार, युद्ध के प्रथम वर्ष में, विराम के ऐसे ही क्षणों में इसी ढंग की चर्चा चल पड़ी थी –विशेषकर बच्चों के सम्बन्ध में। उस रात, सभी के सो जाने के बाद, अकेला प्योतर सेर्गेयेविच ही देर तक जागता रहा था। तब सहसा ही उसे सारी बात साफ़ तौर पर समझ में आ गई थी कि वाल्या ने बच्चे के बारे में क्यों पूछा था : वह शिशु के आगमन के सत्य से परिचित थी। उसने उसे सच बताने की कोशिश की। इसीलिए उसके दिल को भारी ठेस लगी थी। यह बात अब इतनी स्पष्ट थी कि उसे समझ ही नहीं आता था कि उसने पहले से ही इस सम्बन्ध में विचार क्यों नहीं किया। उसने उसी क्षण वाल्या को एक पत्र लिखा। किन्तु वह पत्र वापस आ गया, क्योंकि वाल्या को किसी अन्य सुरक्षित स्थान पर भेजा जा चुका था। धीरे-धीरे उसकी वह तीव्र भावना मन्द हो गई और वह इस परिणाम पर पहुँचा कि यदि बच्चा हुआ होता तो वाल्या उसे सूचित कर देती।

लड़का चुपचाप और विनीत भाव से आगन्तुक के फिर से बात शुरू करने की प्रतीक्षा करता रहा।

"यह मुझसे काफ़ी मिलता-जुलता है, हाँ, हाँ, मिलता-जुलता है," प्योतर सेर्गेयेविच सोच रहा था। ये शब्द उसके मस्तिष्क में रक्तचाप की भाँति 'चप-चप' कर रहे थे।

उसके सामने अपनी बचपन की तस्वीर आ गई। उसने बचपन के छायाचित्रों में अपने को जैसा देखा था और माँ से अपने सम्बन्ध में जो कुछ सुना था, उसके अनुसार वह भी इस लड़के की भाँति नक-चिढ़ा था। उसके माथे पर भी बल पड़ा रहता था। उसने कमरे में इधर-उधर देखा। कमरे को देखकर कोई भी यह बता सकता कि उस कमरे के वासी केवल दो प्राणी —एक औरत तथा एक बच्चा —ही थे। वहाँ तो एक राखदानी तक भी दिखाई न देती थी।

"तुम्हारे पिता कहाँ हैं?" आख़िरकार उसने चुप्पी को भंग किया।

"उनका युद्ध-क्षेत्र में देहान्त हो गया था।"

लड़के ने जिस शान्त भाव से उत्तर दिया, उससे यह स्पष्ट था कि वह बहुत समय से यह बात कहने का अभ्यस्त था। वाल्या ने यह कैसे निर्णय किया कि वह मर चुका है? अथवा यह भी हो सकता है कि वाल्या ने शादी कर ली हो और बच्चा सोचता हो कि कोई दूसरा ही उसका बाप था।

"कब?" प्योतर सेर्गेयेविच ने पूछा।

"बहुत समय पहले, युद्ध के आरम्भ में ही। पेतका के पिता भी मारे गए थे। वे भी वीर थे।"

"क्या तुम्हें उनके बारे में कुछ याद है?"

लड़का सामने के सोफ़ा पर अपने घुटने पेट से चिपकाए बैठा था। उसे एक मेजर से अपने व्यक्तिगत मामलों की चर्चा करना बहुत भला लग रहा था।

"पिता जी जब लाम पर गए, तब मैं बहुत छोटा था। कुदरती तौर पर मुझसे जुदा होते समय वे बहुत दुखी थे। पर इसके सिवा चारा ही क्या था? कुछ भी तो नहीं हो सकता था।"

लड़का चुप हो गया। उसने तन्मयता में अपने नीचे के होंठ को दबाया। प्योतर सेर्गेयेविच को अपनी वैसी ही आदत की याद आ गई। गहरे विचारों में खोकर वह भी वैसा ही करने का आदी था।

सहसा मुख्य द्वार का ताला चिर परिचित तथा तत्क्षण पहचानी जाने वाली 'खट' की आवाज़ करता हुआ खुला। वाल्या दरवाजे के बीचोंबीच खड़ी थी। उसमें कोई परिवर्तन न हुआ था —कम-से-कम पहली नज़र में तो प्योतर को ऐसा ही लगा —एक उड़ते हुए पक्षी की भाँति, छोटी-सी और दुबली-पतली। काली तिरछी बरौनियों वाली उसकी गहरी नीली आँखें भी पहले की भाँति ही थीं।

प्योतर सेर्गेयेविच उसे मिलने के लिए उठकर खड़ा हो गया। वाल्या की भौंहें आश्चर्य के कारण फैल-सी गईं, किन्तु उसके होंठों पर मुस्कान की रेखा न थी।

"आप से मिलने के लिए एक कामरेड आए हैं," लड़के ने कहा।

"हूँ, फ़ेद्या, तुम थोड़ी देर के लिए माशा मौसी के पास चले जाओ। मैं थोड़ी देर बाद आकर तुम्हें ले जाऊँगी।"

लड़के ने अपनी माँ के उत्तेजित मुख तथा व्यग्र मेजर की ओर एक बार देखा और उसके बाद ध्यान से अपने काग़ज़, दवात और किताबों को एक ही बार में समेट कर, कमरे से बाहर चला गया।

अपनी उत्तेजना के बावजूद भी प्योतर सेर्गेयेविच मुस्करा दिया। वह तत्काल ही समझ गया कि फ़ेद्या एक बार में ही अधिक-से-अधिक किताबें केवल इसलिए उठाकर ले गया है कि उसे प्रभावित कर सके। और वह यह जान कर हैरान हुआ कि इस बच्चे का हर काम उसके लिए कितना स्पष्ट तथा प्रिय था।

वाल्या का लड़के की उपस्थिति में बातचीत न करना, बैठते हुए अपनी बरसाती को न उतारना, जैसे कि उसका अपना कमरा, प्योतर की उपस्थिति के कारण पराया बन गया हो, कुछ ऐसे तथ्य थे जिन्होंने प्योतर सेर्गेयेविच के लिए तत्क्षण यह स्पष्ट कर दिया कि वाल्या सदा ही यह जानती थी कि वह जीवित था अथवा उसके सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानती थी और न ही कुछ जानना चाहती थी। वह समझ गया कि उसने जानबूझकर लड़के को यह बताया था कि वह मर चुका है। किन्तु वह इस बात की तह तक न पहुँच सका कि उसने ऐसा क्यों किया और इस प्रकार आश्चर्य से उसे देखता हुआ वह सामने खड़ा था।

"हाँ तो, पेत्या, यह वही है। मैं अभी तुम्हें सब कुछ बताऊँगी," वाल्या इतना कह कर चुप हो गई।

वह अपने विचारों को शृंखलाबद्ध करने में कठिनाई अनुभव कर रही थी। अत्यधिक घनिष्टता का द्योतक जो सम्बोधन उसके मुंह से अनजाने ही निकल गया था, उसने सोई स्मृतियों को फिर से जगा दिया और इसलिए जिस शान्त तथा स्थिर ढंग से वह अपनी बात कहना चाहती थी, अब अपने को उसके अयोग्य पा रही थी।

इसने प्योतर सेर्गेयेविच को भी उत्तेजित कर दिया किन्तु भिन्न प्रकार से। उसने इसे वाल्या की ओर से इस बात की स्वीकृति माना कि वह उसके जीवन में अभी भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। युद्ध के लम्बे वर्षों, नौकरी सम्बन्धी व्यस्तताओं तथा रात-दिन के सफ़रों के कारण और यह जान लेने पर कि उसका एक बेटा है, जिस एकाकीपन ने मास्को में उसके मन को घेर लिया था, उसे इस ढंग की स्वीकृति की बहुत आवश्यकता थी। उसने इसे वाल्या की ओर से, अपने पुराने सम्बन्धों को दोबारा शुरू करने की हामी समझा और उसने उसी कमरे में, वाल्या और अपने बेटे के साथ अपने भावी जीवन के प्रत्येक अंश की स्पष्ट रूप से कल्पना कर डाली। उसे इस बात का एहसास हुआ कि वह बहुत समय से यही स्वप्न लेता रहा है, यही चाहता रहा है। यद्यपि पीछे कुछ समय से विवाहित जीवन के सपनों में वाल्या की ओर उसका बहुत कम ध्यान गया था, तथापि अब इस सम्बन्ध में उसे पूरा विश्वास हो गया कि केवल उसी के साथ विवाह करना उचित होगा। यही विवाह स्थायी भी होगा। वह यह सोचकर हैरान था कि उसी क्षण जबकि वह इतना थका-थका और एकाकी-सा महसूस कर रहा था, उसे वाल्या को पाना था, जो उसे प्यार करती थी और जिसने उसके बच्चे को पाला-पोसा था। उसने एक साथ बिताई अन्तिम शाम और भीगे हुए पोप्लार के वृक्ष की गन्ध को अपनी स्मृति में दोहराया तथा भावुकता से खिड़की की ओर देखा।

"सन् इकतालीस में बहुत सर्दी होने पर, मैं मेज़ को जलाने के काम में ले आई थी।"

प्योतर सेर्गेयेविच यह याद न कर सका कि खिड़की के पास कोई मेज़ भी होती थी और यदि हाँ, तो किस जगह। किन्तु फिर भी उसने अपना सिर इस तरह से हिलाया जैसे कि वह उसी के बारे में सोच रहा था। किन्तु तभी उसने महसूस किया कि ऐसा करना ग़लत था। ऐसी स्थिति में उसे आपस की मामूली-सी ग़लतफ़हमी भी असह्य थी।

"मैं मेज़ नहीं, खिड़की के बारे में सोच रहा था," उसने कहा। वह यह जानता था कि उसके ऐसा कहने से बातचीत में उलझन पैदा होने की सम्भावना थी। उसने आशंका से वाल्या की आँखों में झाँका। इस बार उसने उनमें सौंदर्य की बजाय थकान और दुख की झलक देखी। और केवल उसी क्षण से उसने वास्तव में अपने को वाल्या के बेहद समीप अनुभव किया। इतना समीप, जितना कि वह पहले कभी न था। शायद इसीलिए वाल्या आसानी से और बिना हिचकिचाहट के उससे बातचीत करने लगी। उसे उस रात के बाद की, जिसके बाद वे फिर कभी नहीं मिले थे, सभी बातें याद आ गईं।

उसके जाने के बाद वह चाहती थी कि उसके पीछे दौड़े, उसे रोके और बताए कि एक बच्चा होने वाला था और यह कि उसकी नींव रखी जा चुकी थी। उसने अनुभव किया कि उसे उस घनिष्ठता को लौटाना भर ही था, जिसे वह कुछ समय से खो चुकी थी और जो पहले की अपेक्षा अब कहीं अधिक आवश्यक थी। उसने उसके उस चेहरे और शब्दों की कल्पना की जो उसकी आशंकाओं को दूर करके उसमें फिर से विश्वास पैदा करेंगे। किन्तु वह चेहरा, जिसमें प्यार का लेशमात्र न था और जो

बच्चे की चर्चा होते ही क्रोध से भर गया था, उसके लिए पहले से ही पराया हो चुका था। और उसके साथ ही एक अनजाना धुंधला और छोटा-सा चेहरा उभरा। इस चेहरे में वह सभी कुछ था, जोकि उस आदमी में सर्वोत्तम था, जिसे वह प्यार करती थी – उसकी अत्यधिक प्रिय लगनेवाली मन्द-मन्द मुस्कान, उसकी भृकुटी को तान लेने तथा नीचे के होंठ को काटने की आदत। और यह छोटा-सा, अपरिचित और प्यारा मुख उसके लिए पहले से ही आवश्यक बन चुका था। और तभी वाल्या की समझ में आया कि जिस चीज़ ने उनके जीवन में उलझन पैदा कर दी थी, वह बच्चे से सम्बन्धित बातचीत नहीं थी बल्कि उस ढंग की ज़िन्दगी और वे सम्बन्ध ही ग़लत थे। और बच्चों से सम्बन्धित बातचीत ने उसे इस तथ्य को पूरी तरह समझने में मदद ही दी थी। उस समय तक उसे इस बात ने कभी चिन्तित न किया था कि वे अलग-अलग रहते थे। दोनों विद्यार्थी थे और यह अनुभव करते थे कि उन्हें एक दूसरे के आश्रय में जाने की आवश्यकता नहीं थी। स्नातक होने के एक वर्ष बाद उनका नया जीवन आरम्भ होने वाला था और वाल्या को विश्वास था कि उस नए जीवन को वे दोनों इकट्ठे मिलकर शुरू करेंगे।

उस रात वह पलक तक न झपका सकी। वह सोचती और रोती हुई लेटी रही। किन्तु प्योतर सेर्गेयेविच के लिए उसकी प्यार की भावना इतनी प्रबल थी कि जो कुछ उसकी समझ में आया था उस पर उसे विश्वास ही नहीं होता था। वह अगली सुबह उसे सचाई बताने के लिये गई। वह यह विश्वास लेकर गई कि उसे सब कुछ समझ में आ जाएगा।

होस्टल में उस समय कोई नहीं था। उसके सिरहाने रखी हुई मेज़ पर एक गिलास और एक कड़ाही पड़ी थी। गिलास में काफ़ी के कुछ क़तरे और कड़ाही में तले हुए आलुओं के बचे हुए अंश पड़े थे। सिरहाने वाली मेज़ के पास वाले दरवाज़े की दस्तक से एक रस्सी लटक रही थी जिसके साथ एक कागज़ का टुकड़ा बंधा था।

काफ़ी देर तक वाल्या उस कागज़ के पुर्ज़े की लिखावट का अर्थ न समझ सकी। रात-भर के जागरण तथा भावातिरेक के कारण उसे सभी कुछ अजीब-अजीब-सा लग रहा था और उसकी एकाग्रचित्तता में बाधा पड़ रही थी। कुछ कारणवश, उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह कागज़ का पुर्ज़ा उसी के लिए लिख कर रखा गया था। उसने धागा खोलकर कागज़ को ठीक किया। किन्तु वह तो अख़बार का एक टुकड़ा ही था। तभी उसने देखा कि एक हल्के रंग का बिल्ली का बच्चा बिस्तर पर सोया पड़ा था। वाल्या को यह भी विदित हो गया कि वह बिल्ली के बच्चे से खेलता रहा था, जिसका अर्थ यह था कि वह रात और वह सुबह जो उसके लिए बेचैनी से भरपूर और महत्वपूर्ण थी, प्योतर सेर्गेयेविच के लिए उनके झगड़े के बावजूद, वही बहुत साधारण थी। उसने रात के समय अच्छी तरह आराम किया, काफ़ी का गिलास पिया, आलू तले, बिल्ली के बच्चे के साथ खेला और तब यूनिवर्सिटी गया। उसने अपनी सुबह चैन से गुज़ारी। पर अब इसका उपाय ही क्या है। तभी उसने उस कागज़ के पुर्ज़े पर लिखा, "मैं तुम से फिर कभी मिलना नहीं चाहती।"

उसने अनुभव किया कि उसने अपने बच्चे के साथ अन्याय किया

है। वह दिन समीप से समीपतर आता-जाता था जब उसका बेटा उससे अपने पिता के बारे में पूछने के योग्य हो जाएगा – पिता, जो उसे प्राप्त न था। और आख़िर जब उसने उससे पूछा कि उसका पिता कहाँ है, तो उसने उसकी आँखों में एकटक देखते हुए जवाब दिया था कि उसके पिता लाम पर गए थे और वहीं काम आए। इस तरह उसके बच्चे को उसका बाप मिल गया।

युद्ध के कठिन वर्षों में बहुत से बच्चे इस दुनिया में आए जो कभी भी अपने पिता को देख नहीं पाए। बहुत से बच्चों के पिता बहुत दूर युद्ध के क्षेत्र में थे, किन्तु तो भी वे अपने बच्चों की कल्पना में सदा जीवित थे। बच्चे सदा उन्हें अपनी कल्पना में भले और सशक्त पिता के रूप में अपने साथ अनुभव करते थे। और जिनके पिता लाम से नहीं लौटे वे उन्हें जीवन भर याद रखेंगे। वाल्या ने अपने बेटे को एक ऐसा ही काल्पनिक पिता प्रदान किया था।

वाल्या अपने बेटे को उसके प्यार के सम्बन्ध में बताया करती थी। वह उसे उसी से विदा होने के सम्बन्ध में बताती, और उसका बेटा यह कहने का अभ्यस्त हो गया था "पिता जी होते तो इसे ऐसे करते।"

वाल्या चुप हो गई। प्योतर सेर्गेयेविच भी चुप था। जब से वाल्या ने उसे उस मेज़ के सम्बन्ध में बताया था जो कि जलाने के काम लाई गई थी, वह लगातार मन की आँखों से वाल्या और इस कमरे को देख रहा था। उसने अपनी कल्पना में वह रात भी देखी जब वह उसे छोड़ कर चला गया था और वह अकेली रोती रही थी। और वे रातें भी जब

अपने बच्चे के पालने के पास बैठी हुई उसके बारे में सोचती रही थी तथा बाद में बच्चे से उसके बाप के सम्बन्ध में बातें करती रही थी। और अब प्योतर सेर्गेयेविच उस दूसरे बाप की उपस्थिति को अनुभव कर रहा था जिसका निर्माण वाल्या ने बच्चे के लिए किया था। यह वह पिता था जिसने उसे यहाँ प्रतिस्थापित कर दिया था। उसने वाल्या को अब उस ढंग से सुना जैसा कि उसे तब सुनना चाहिए था। वह अपने आपको इस सन्देह में नहीं डालना चाहता था कि क्या आख़िर उसके मन में सच्चे प्यार की भावना जाग उठी है अथवा वह उसके साथ सुखी भी रह सकेगा। पर वह चाहता था कि अपने सर्वस्व से वह उसकी मुसीबत और उसके एकाकीपन का भागी बने। और उसकी आँखें, मुख तथा शरीर की अन्य चेष्टाएँ अब उसके लिए केवलमात्र एक सुन्दर स्त्री की ही, नहीं थीं। ये वे आँखें थीं जो उसे प्रिय थीं, कुछ पका चेहरा और काम करके मुरझाए हुए हाथ थे। उसके लिए जो चेष्टाएँ अब इस दुनिया में महत्वपूर्ण थीं वे एक प्रिय, अत्याज्य और थके मानव की चेष्टाएं थीं।

युद्ध के वर्षों ने प्योतर सेर्गेयेविच को सुन्दर ढंग से बातें करना भुला दिया था और उसे तो यह सोचकर अब शर्म भी आने लगी थी कि कभी वह ऐसी बातें कह सकता था। वह वाल्या से कुछ भी न कह सका। वह उसे यह भी नहीं बता सकता था कि वह उसे भली भांति समझ गया था और यह कि वह उस काल्पनिक आदमी का रूप भी ठीक तरह से पहचान गया था जिसे उसने अपने प्यार में खोकर बनाया था; क्योंकि बीते हुए कुछ कठिन वर्षों में वह भी बहुत-सी बातों में उस काल्पनिक

आदमी के समान ही हो गया था। और इसी कारण वह जानता था कि अब वाल्या के साथ उसका रहना न केवल असम्भव ही था, बल्कि यह बताना भी कि वह उसके साथ रहने को कितना इच्छुक था।

तब तक वह यह बात निश्चित रूप से समझ गया था कि उसे उसी दिन ही उस नगर के लिए चल देना होगा, जहाँ उसे एक कारख़ाने में काम करना था। वहाँ, उनसे बहुत दूर, उसे अकेले ही रहना होगा। वह सोच रहा था कि वाल्या कभी भी लड़के को यह नहीं बताएगी कि उसका बाप जीवित है, और यह कि वह कुछ देर पहले उनके साथ था। और इस तरह आजीवन वह लड़का उसी पिता को प्यार करता रहेगा, जिसे उसकी माँ ने उसके लिए अपनी कल्पना द्वारा रचा था। जो पत्र वह वाल्या को लिखेगा, वह उसे उनके बेटे को नहीं दिखाएगी और जो उपहार तथा द्रव्य वह उन्हें भेजेगा, सम्भवतः वाल्या उन्हें लौटा देगी। प्योतर सेर्गेयेविच सोच रहा था कि वह बहुत ही एकाकी और ऊबा हुआ इन्सान था और अपने एकाकीपन के लिए वह स्वयं ही ज़िम्मेदार था। उसके पास वाल्या को कहने के लिए कुछ भी नहीं था, क्योंकि वह स्पष्ट रूप से यह देख रहा था कि अब वह उसपर कभी भी विश्वास नहीं कर सकेगी। वह उठ खड़ा हुआ और बड़े अजीब ढंग से, क्योंकि इससे सभी कुछ अस्पष्ट रहेगा, विदा लेते हुए उसने हाथ मिलाया।

मौसी माशा, जिसके पास वाल्या ने फ़ेद्या को भेजा था, घर पर नहीं थी और फ़ेद्या प्रतीक्षा करते-करते तंग गया था। इसके अतिरिक्त उसके मन को जिज्ञासा ने घेरा हुआ था। इससे पूर्व, जब कभी मिलने वाले उसकी

माँ के पास आते थे, वह उसे कभी बाहर नहीं भेजती थी। इसलिए फ़ेद्या रसोईघर में ठहरा हुआ था और बाहर जाने के मार्ग की ओर झाँक रहा था। उसने दरवाज़े को खुलते और मेजर को बाहर आते देखा। यद्यपि बाहर जाने के मार्ग में घुप अँधेरा था, तथापि वह बहुत विश्वास के साथ मुख्य द्वार तक पहुँच गया। उसने दरवाज़ा खोला, किन्तु दहलीज़ पर जाकर रुक गया। फ़ेद्या ने सोचा कि शायद मेजर उससे विदाई-नमस्कार करना चाहता था। किन्तु यदि अब वह बाहर आता, तो स्पष्ट हो जाता कि वह झाँकता रहा था। अब मेजर दरवाज़े में खड़ा था, झुका हुआ और निश्चेष्ट। कुछ देर पहले जो ईर्ष्या तथा श्रद्धा की भावना उसने फ़ेद्या के दिल में पैदा की थी, वह अनजाने ही दया में बदल गई। किन्तु तभी मेजर ने दहलीज़ पार की और दरवाज़े के खट से बन्द होने की आवाज़ सुनाई दी।

फ़ेद्या को लौटा ले जाने में जब माँ ने काफ़ी देर लगा दी, तो वह अपने आप ही कमरे में चला गया। उस समय तक फ़ेद्या ने माँ को रोते हुए केवल एक बार ही देखा था। यह बहुत वर्ष पहले हुआ था। तब फ़ेद्या ने अभी स्कूल जाना भी आरम्भ नहीं किया था। वह विजय-दिवस था। तब उसने उसे बताया था कि वह खुशी के मारे रो रही थी और आँसुओं से तर आँखों से उसके सामने मुस्करा दी थी। आज वह फिर रो रही थी। वह सामने के कमरे वाली लड़की की भाँति ज़ोर-ज़ोर से रोती हुई सुबक तथा हाँफ रही थी। वह ऐसे क्यों रो रही थी? फ़ेद्या को कुछ समझ न आ रहा था। वह उसके पास यह सोचता हुआ अनिश्चित-सा खड़ा

था कि क्या उसे भी रोना प्रारम्भ कर देना चाहिए।

"अभी-अभी जो यहाँ थे वे तुम्हारे पिता के मित्र थे," माँ ने कहा। "वे तुम्हारे पिता से बहुत मिलते-जुलते हैं," उसने धीमी आवाज़ में आगे कहा। "उनकी भाँति ये भी मौन-धारी हैं। इन्हें भी बच्चों से प्यार है। किन्तु ये बहुत कठोर हैं...मेरे प्यारे फ़ेद्या..." वह सहसा ही इस लाचारी से सुबकी कि फ़ेद्या को तत्क्षण ही यह एहसास हुआ कि अब वह काफ़ी बड़ा लड़का हो चुका था और यह कि अब उसे रोना नहीं चाहिए था। "प्यारे फ़ेद्या, लेकिन तुम्हारे पिता, वे जीवित हैं..."

दीदी

भिड़ें अंगूरों के सभी ओर भिनभिना रही थीं। साँवली औरतें नाराज़ होकर उन्हें दूर भगाने के लिए उनके पीछे दौड़तीं, किन्तु वे अंगूरों की मधुर तथा तेज़ सुगन्ध से आकर्षित होकर फिर लौट आती थीं। मीत्या, ओल्गा तथा उसका भाई अल्योशा इकट्ठे होकर अंगूर खरीदने के लिये गए थे। ओल्गा ने अपने भाई को पुकारा "केकड़े"। जब तक अल्योशा छोटा था इस उपहासजनक उपनाम को सहन करता रहा, किन्तु अब उसे यह असह्य था। अल्योशा ने उस समय तक उसकी आवाज़ों का जवाब न दिया जब तक कि उसने हार मान कर ऐसे नहीं पुकारा "अल्योशा, इधर आओ"। खैर, मतलब यह कि ओल्गा जान-बूझकर उसे दूसरों के सामने ऐसे आदेश देती –"केकड़े , अपने हाथ धो लो!" "केकड़े, अपनी नाक साफ़ कर लो!" "भीतर आ जाओ, केकड़े!" "चले जाओ, केकड़े!" इत्यादि। वह यह सभी कुछ सहन न कर सकता था। अगर उसे माता-पिता के साथ गड़बड़ होने का डर न होता, तो उसने कभी का अपनी बहन को पीट डाला होता। किन्तु पिता सदा यह कहते थे कि आदमी को अपनी शारीरिक शक्ति का कभी अनुचित लाभ न उठाना चाहिए।

"केकड़े, अंगूरों को मत खाओ, ये धोए हुए नहीं है।"

"किन्तु ये अभी ताज़े तोड़े गए हैं, इसलिए साफ़ हैं," और मीत्या एक खा गया।

अल्योशा ने भी वैसा ही किया। कम-से-कम ओल्गा को मीत्या से

कुछ कहने की हिम्मत नहीं होती थी। वह उससे पूरा एक साल बड़ा था। वह सुदूर उत्तर की ओर से आया था जहाँ आधा वर्ष दिन और आधा वर्ष रात रहती है। उसने वास्तव में ही बारहसिंगों को हाँका था और वास्तविक उत्तरीय रश्मियों को अपनी आँखों से देखा था। अल्योशा को इससे पूर्व कभी किसी से इतनी ईर्ष्या नहीं हुई थी, जितनी कि मीत्या से। यह ज़ाहिर था कि पाँच वर्षों के बाद, जब वह भी अठारह वर्ष का हो जाएगा, उसका क़द, इस समय जितना मीत्या का क़द था, उससे छोटा होगा। और यह भी कौन बता सकता था कि क्या वह भू-तत्त्व और वनस्पति शास्त्र में मीत्या की भाँति योग्य बन सकेगा, अथवा वह मीत्या की भाँति अगन्त्र-विमान (ग्लाईडर) भी बना सकेगा जैसा कि उसने उसकी उपस्थिति में ही चन्द दिन पहले, संध्या समय बैठ कर बनाया था। और जहाँ तक उत्तरीय रश्मियों का सम्बन्ध था, वह उन्हें तो कभी भी देख नहीं पाएगा।

और फिर ऐसे व्यक्ति की उपस्थिति में, परिचय होने के एक घंटे के समय में ही, ओल्गा ने उसे "केकड़े" कह कर पुकारा। और केवल थोड़ी देर पहले ही मीत्या ने कहा था –

"अच्छा अल्योशा, आओ डुबकी लगाएँ। लगाते हो न?"

और अल्योशा इतनी अधिक देर तक पानी की सतह के नीचे रहा कि मीत्या उसके फेफड़ों की आश्चर्यजनक शक्ति से दंग रह गया था। और फिर जब वे पानी से बाहर निकले तो ओल्गा दिखाई दी। इससे पूर्व कि अल्योशा उसे आँख के इशारे से समझा देता, धमकाता अथवा अन्तिम उपाय के रूप में प्रार्थना कर पाता, उसने कहा –

"घर चलो, केकड़े!"

अल्योशा ने पीछे मुड़ कर देखा। मीत्या पानी से बाहर आ चुका था और अब उनकी ओर आ रहा था। उसे आता देख अल्योशा को तो अलबत्ता आगे यह कहना ही था –

"कितनी बार मैंने तुमसे यह कहा है कि तुम मेरी अनुपस्थिति में मत तैरा करो – तुम अवश्य डूब जाओगे।"

"डूब जाऊँगा? मैं?" इस अपमान से ही अल्योशा का रंग पीला पड़ गया।

"पर यदि वह केकड़ा है तो नहीं डूबेगा," मीत्या ने सांत्वना देते हुए कहा।

तो उसने आख़िर सुन ही लिया था!

"मज़ाक़ की बात नहीं, वह केकड़े से काफ़ी मिलता-जुलता है," मीत्या मुस्कराया, और फिर पुरुष की फ़राख़-दिली के साथ उसने आगे कहा – "यही कारण है कि वह इतना अच्छा तैरता है।"

अल्योशा ने ऐसे ज़ाहिर करने का यत्न किया कि जैसे वह सुन ही नहीं रहा था। कम-से-कम ओल्गा को उस आदमी को देखना चाहिए जिसने उसे उसका हक अदा कर दिया था। किन्तु उसकी बहन रेत में से एक सीपी खोद निकालने में अत्यधिक व्यस्त थी। उसने कुछ भी नहीं कहा। सीपी बहुत साधारण थी। उन्होंने सुख़ूमी पहुँचने के दिन ही इन सीपियों को इकट्ठा करके बक्स भर लिया था, और उसके बाद कभी का उन्हें फेंक भी दिया था, क्योंकि उनसे अधिक सुन्दर मिल गई थीं। मीत्या पास

खड़ा था और बहुत ध्यान से ओल्गा को रेत को खोदते हुए देख रहा था। क्या उसने कभी पहले इस ढंग की समुद्री-सीपियों को नहीं देखा? ओल्गा ने अपनी आँखों को थोड़ा-सा ऊपर उठाकर मीत्या को देखा, किन्तु उसने उसकी तनिक सराहना नहीं की और फिर से अपने रेत खोदने के काम में लग गई। कुछ ऐसा ही उसने अनुभव किया। अल्योशा ने धीमी आवाज में कहा –

"मेरी बहन ओल्गा से मिलिए। दिमीत्री, मेरा नया मित्र, यह उत्तरीय ध्रुव-वृत्त से आया है।"

आख़िरकार ओल्गा की आँखों में जिज्ञासा की चमक दिखाई दी। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, क्योंकि हर भाई इस ढंग के लोगों से परिचित नहीं होता। किन्तु अल्योशा का विजय - हर्ष क्षणिक था। बहुत शीघ्र ही ओल्गा मीत्या के सम्बन्ध में उतना ही जान गई जितना कि अल्योशा जानता था। शायद कुछ अधिक ही, क्योंकि जब वे तैर रहे थे अल्योशा समुद्र-तट पर खड़ा हुआ ओल्गा की कलाई की घड़ी की रखवाली कर रहा था। और सम्भवतः मीत्या ने पानी में ओल्गा को कुछ और भी बताया, क्योंकि जब वे बाहर आए तो ओल्गा ने कहा –

"हाँ, यह तो बहुत मज़ेदार बात है!"

उस दिन के बाद ये तीनों सदा इकट्ठे रहते थे। ये इकट्ठे गलियों में घूमते और गुलाबी तथा सफ़ेद फूलों से लदे पेड़ों और झाड़ियों के समूहों की प्रशंसा करते, इकट्ठे तैरते, इकट्ठे समुद्र-तट पर धूप सेंकते तथा इकट्ठे सिनेमा देखने जाते। तब, एक दिन, मीत्या उनके घर आया और

वे उसे बानर-शिशु-गृह में ले गए। उनकी माँ वहाँ काम करती थी।

मीत्या से मिलते ही, अल्योशा ने सपने बुनना शुरू कर दिया था कि कैसे वह उसे शिशु-गृह में ले जाएगा, उसे बानर दिखाएगा और माँ के काम के सम्बन्ध में बताएगा। वह एक नई औषधि का बानरों पर परीक्षण कर रही थी। तजरुबे सफल रहे थे। इस तजरुबे की अन्तिम अवस्था में बानरों की बारी आई थी। वह औषधि अब इन्सानों के प्रयोग में लाई जाने वाली थी।

किन्तु मीत्या को यह सभी कुछ उसकी बहन ने बताया। यहाँ तक कि मीत्या की उपस्थिति में वह साही के पिंजरे में भी गई। साही अपने कुत्ते की-सी बनावट वाले चेहरे, नीले धारीदार गालों, भूरी दाढ़ी तथा कंधों पर के घने लम्बे बालों के कारण काफ़ी डरावना लग रहा था। मीत्या ने ओल्गा की ओर अत्यधिक आदर की दृष्टि से देखा। अलबत्ता वह यह न जान सका कि साही उसी शिशु-गृह में पैदा हुआ था, और उसकी माँ मर गई थी, तथा रखवाली करने वाली स्त्री मौसी माशा ने उसे बोतल से दूध पिला-पिला कर पाला था। साही, अपनी भयानक शक्ल के बावजूद, एक बिल्ली के बच्चे-से कम ख़तरनाक था। किन्तु ओल्गा ने उसके पिंजरे में कुछ ऐसी अदा से प्रवेश किया कि जैसे एक शेरों को सिधाने वाला, शेरों से भरे पिंजरे में दाख़िल हो रहा हो। साही उसकी ओर दौड़ा। उसने अपनी लम्बी भुजाओं को उसके गिर्द फैला दिया और उसे देखकर धीमे-धीमे कुछ बुड़बुड़ाया। उसने मुस्कराते हुए अपने होंठ को सिकोड़ लिया और अपने बड़े-बड़े पीले दाँतों की जड़ें दिखाईं।

"तुम्हारी बहन भी क्या ख़ूब है!" मीत्या प्रशंसा किए बिना न रह सका।

और अल्योशा को मानना पड़ा।

"वह अच्छी है।"

किन्तु मीत्या ने यह सुना नहीं। वह तुरन्त ही ओल्गा के झुके चेहरे और उसके बहुत हल्के भूरे बालों की ओर देखने लगा था। साही ने उन्हें अस्त-व्यस्त कर दिया था और अब वे उसके सिर के चारों ओर एक सुनहरा चन्द्र-सा बनाए हुए थे। ओल्गा शर्मा रही थी। उसने अपने आपको साही के आलिंगन से मुक्त किया और पिंजरे से बाहर निकल आई। इसके बाद मीत्या ने ओल्गा की बातों को इतने आदरभाव से सुना कि उनकी बातचीत के दौरान अल्योशा कहीं इधर-उधर से एक शब्द भी नहीं कह पाया। यहाँ तक कि जब ओल्गा ने नवजात बानर शिशु को ग़लती से 'पेतका' नाम बताया जब कि उसका वास्तविक नाम कहीं अधिक आकर्षक 'बनान' (केला) था, और अल्योशा ने ओल्गा की भूल को सुधारना चाहा तो मीत्या ने उसकी ओर देखा तक नहीं। वे दोनों अल्योशा के आगे-आगे चल रहे थे। ओल्गा मीत्या से कहीं छोटी थी, किन्तु इस समय वह लम्बी, छरहरी तथा लम्बी-लम्बी टाँगों वाली दिखाई दे रही थी। अल्योशा की अपेक्षा उसकी चमड़ी कहीं अधिक शीघ्रता से धूप में साँवली हो गई थी और यों भी शुरू से ही उसका रंग बादामी तथा एक समान था और आँखें पहले से अधिक भूरी। क्योंकि उसके बाल भूरे थे, सम्भवतः इसीलिए उसका रंग बहुत शीघ्रता से काला हो गया था। किन्तु मीत्या तो पहले

से ही सांवला था और उसकी आँखें भूरी थीं, तो भी उसका शरीर काफ़ी सुन्दर ढंग से रंगा गया। और जहाँ तक अल्योशा का सम्बन्ध था वह भी बादामी नहीं पड़ा था, बल्कि तमाम लाल-लाल था। वे चित्ते जोकि उसके ख़्याल के मुताबिक रंग में मिलकर कभी के अदृश्य हो जाने चाहिए थे, पहले से भी कहीं अधिक साफ़ दिखाई देने लगे थे तथा उसकी नाक तो बिल्कुल छिली हुई सी लगने लगी थी। अल्योशा आह भर कर रह गया।

वे सीढ़ियों से बाहर जाने के द्वार की ओर नीचे उतर रहे थे, जब उन्होंने नीचे अपनी माँ को देखा। यहाँ आख़िर अल्योशा की क़िस्मत ने उसका साथ दिया। ओल्गा के जूते में एक कंकर चला गया था और वह उसे हिलाकर निकालने के लिए रुक गई थी। अल्योशा पहले ही माँ के पास पहुँच गया और बोला –

"माँ, मेरे नए मित्र दिमीत्री से मिलो, यह उत्तरीय ध्रुव-वृत्त से आया है।"

अल्योशा ने जितनी भी ज़्यादतियाँ सहन की थीं, उसे उन सब का मुआवज़ा मिल गया जब माँ ने मीत्या को स्पष्टतया प्रशंसात्मक दृष्टि से देखा और प्रौढ़ों की भाँति गर्मजोशी से हाथ मिलाया।

"मुझे तुमसे मिलकर बहुत खुशी हुई है," माँ ने गम्भीरतापूर्वक कहा।

और जब तक ओल्गा अपने जूते को ठीक करके उन तक पहुँची, यह स्पष्ट हो चुका था कि मीत्या अल्योशा का मित्र था और उसका ओल्गा से कोई सम्बन्ध न था। यह जानते हुए कि वह माँ को धोखा नहीं दे

सकेगी, और क्योंकि उसे अपने को प्रतिकूल अवस्था में देखना असह्य था, ओल्गा ने ऐसे ज़ाहिर किया कि जैसे उसे मीत्या की मित्रता का कोई दावा न था और उसने उसकी ओर ऐसे देखना छोड़ दिया, जैसे कि ओल्गा नहीं कोई अन्य व्यक्ति ही पूरे तीन घंटे से आडम्बर करके दिखाता रहा था। माँ के साथ घर की ओर जाते हुए भी ओल्गा ने अल्योशा से बहुत शिष्ट ढंग से बातचीत की और उसे केकड़ा कह कर नहीं पुकारा। अल्योशा ने माँ को ओल्गा की ओर सराहना की दृष्टि से देखते हुए देखा। अल्योशा यह सदा से जानता था कि ओल्गा बहुत धूर्त है। ए काश! वह एक लड़की होता और चुग़ली खाना जानता, तो अवश्य ही माँ को बतला देता कि वह ओल्गा पर अधिक विश्वास न करे। उसने काफ़ी अन्याय किया था; उसे केकड़ा कहा था और मीत्या की उपस्थिति में अपमानित किया था।

ज्यों-ज्यों समय बीता, हालात अल्योशा के अधिक प्रतिकूल हो गए। मीत्या तथा ओल्गा ने आपसी बातचीत के लिए बहुत से विषय खोज निकाले और कुछ ऐसा हुआ कि वे या तो ऐसी किसी पुस्तक की चर्चा करते जो अल्योशा ने न पढ़ी होती, या ऐसी तस्वीर की बात करते जो उसने देखी न होती, अथवा ऐसे विषय का उल्लेख करते जो पाँचवीं श्रेणी में उन्हें तब तक पढ़ाया न गया था। अब कुछ समय से मीत्या उसे "केकड़े" के अतिरिक्त अन्य किसी नाम से पुकारता ही नहीं था और कभी-कभी तो उसे "बड़ा तथा भद्दा केकड़ा" तक कह डालता था। ओल्गा को इसमें बड़ा मज़ा आता और इसलिए मीत्या उसे इसी नाम से अधिक-से-अधिक बार बुलाता था। अल्योशा ने देखा कि जब कभी ओल्गा मीत्या से नाराज़

होती अथवा झगड़ती, तो वह झटपट उसके मूर्खतापूर्ण उपनाम का अधिक-से-अधिक प्रयोग करने लगता और बनावटी तौर पर चिन्तित आवाज़ में कहता –

"केकड़े, अरे ओ छोकरे, क्या ख़्याल है, क्या तुम्हें अपने हाथ नहीं धोने चाहिए?"

ऐसा लगता था कि जैसे मीत्या ओल्गा के इशारों पर नाच रहा था, जोकि एक पुरुष के पौरुष के लायक़ बात न थी। धीरे-धीरे मीत्या का आकर्षण कम होने लगा और इसके परिणामस्वरूप अल्योशा के लिए उसके उपालम्भ सहन करना अधिक आसान हो गया। इसे इस बात से भी काफ़ी सान्त्वना मिली कि मीत्या, जो किसी प्रकार भी ओल्गा पर निर्भर नहीं था, अल्योशा से भी अधिक मात्रा में उसका आज्ञाकारी था। ओल्गा नहाने के लिए जाना चाहती थी, इसलिए मीत्या भी नहाने गया, यद्यपि उसने कुछ देर पहले ही कहा था कि वह वनस्पति-अनुसन्धान-उद्यान की ओर जा रहा है। मीत्या ने समुद्र-तट की ओर चलने का सुझाव दिया किन्तु ओल्गा ने घोषणा की कि वह नगर में घूमना पसन्द करेगी बस, मीत्या ने अपने पाँव नगर की ओर बढ़ा दिए। अल्योशा भी पीछे-पीछे चल दिया। इस ग़रीब की बहुत बुरी हालत थी। माँ ने कहा था, "बहन के बिना एक क़दम भी नहीं चलना।"

सुख़ूमी से लौटने का उनका जो दिन निश्चित हुआ था उसके लगभग एक सप्ताह पूर्व अल्योशा के लिए जैसे आसमान से एक मुसीबत प्रकट हुई। उन सब ने शाम के छह बजे के सिनेमा शो में जाने की योजना

बनाई थी। पर, ओल्गा ने अपने फ्राक को इस्त्री करने तथा बाल संवारने में इतना अधिक समय लगा दिया कि उतनी देर में मीत्या तथा अल्योशा ने शतरंज की दो बाज़ियाँ भी लगा लीं। तीसरी बाज़ी में अल्योशा की साफ़ तौर पर जीतने की बारी थी जब ओल्गा ने भीतर आकर कहा "आओ चलें" और मीत्या जो सदा ही आग्रहपूर्वक घोषणा करता था "कभी हार मत मानो" –यही उसका सिद्धान्त है, जल्दी से बड़बड़ाया : "मैं हार मानता हूँ" और तेज़ी से ओल्गा के पीछे दौड़ा जैसे कि वह डूबने वाली थी। किन्तु मीत्या के हार मान लेने से अल्योशा को विशेष प्रसन्नता हुई। आख़िर, वह इस बार जीत ही तो गया था। एक दिन पहले माँ भी मीत्या से हार गई थी और अब वह सन्ध्या को अकस्मात घर पहुँच कर, विस्तार में जाए बिना उन्हें बताएगा "क्या आपको मालूम है कि आज मैंने मीत्या से तीन में से एक बाज़ी जीती थी"। बहुत विनम्रता से कहने का यही तो एक ढंग था "तीन में से एक"।

अल्योशा अपने दिवा-सपनों में इतना अधिक खोया हुआ था कि वह धरती की ओर तभी लौटा जब वे सिनेमा के द्वार के सामने जा खड़े हुए और मीत्या प्रवेशक को अपनी टिकटें देने लगा। प्रवेशक उनकी पुरानी परिचिता एक वृद्धा तथा भली स्त्री थी। अल्योशा उसे अभिवादन करना तथा शो के समाप्त होने के बाद "धन्यवाद" कहना कभी नहीं भूलता था। और आज बिल्कुल ही अप्रत्याशित उसने कहा :

"तुम, युवती, और तुम, युवक, कृपया भीतर जाओ और तुम, ओ लड़के, घर जाओ। तुम्हें यह नियम मालूम है न : आठ बजे के बाद बच्चों

को भीतर जाने की इजाज़त नहीं।"

मीत्या और ओल्गा ने एक दूसरे को प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा। जब तक ओल्गा ने बाहर की ओर एक क़दम बढ़ाया, तब तक अल्योशा ने पीछे मुड़ कर देखे बिना, दूर भागना शुरू कर दिया था। वह मोड़ के पास जाकर रुका और उन्हें, भीड़ में उसे खोजते हुए पाया। तब उसने मीत्या को ओल्गा से कुछ कहते देखा और वह उसे हाथ से पकड़ कर साथ ले चला। उसने उसकी ओर झिझकते हुए देखा, और इसके बाद अपने स्वभाव के बिल्कुल विपरीत, चुपचाप उसके साथ सिनेमा के भीतर चली गई।

अल्योशा बहुत ही भारी मन से घर की ओर चल दिया। यह भी अच्छा हुआ कि माँ अपने काम से घर लौट चुकी थी। उसने अगले दिन उसे साथ ले जाकर सिनेमा दिखाने का निर्णय किया और दोनों शतरंज की बाज़ी लगाने बैठ गए। सब से अधिक हैरानी की बात यह हुई कि बहुत यत्न के बाद माँ हार गई। पर, आख़िर, इसमें हैरान होने की कौन-सी बात थी? अल्योशा तो मीत्या को भी हरा चुका था? इसके अतिरिक्त अल्योशा के विचारों को ध्यानपूर्वक सुनने के बाद (उसने शिकायत नहीं की थी, केवल अपने विचार प्रस्तुत किए थे), माँ ने अन्त में ओल्गा के बिना कहीं पर भी जाने का जो निषेध किया हुआ था, उसे हटा लिया। यह नियम अब केवल तैरने पर ही लागू होना था। इसमें सन्देह नहीं कि अल्योशा को यह छूट प्राप्त करने के लिए माँ को कई वचन देने पड़े थे जैसे कि वह सड़क को ध्यान से पार करेगा, अपना हलुआ खा लिया

करेगा और नाश्ते के समय अपना पेट आइसक्रीम से न भर कर दूध पिएगा। उसका जेब-खर्च भी —सिनेमा तथा अन्य आकस्मिक आवश्यकताओं के लिए —अब उसे ओल्गा से अलग, स्वतन्त्र रूप से मिलेगा। संक्षिप्त में, वह महत्वपूर्ण सुधारों की शाम थी।

और इसके अतिरिक्त अल्योशा को ही यह समाचार सर्वप्रथम प्राप्त हुआ कि माँ की वहाँ ठहरने की अवधि बढ़ा दी गई है। अब उन्हें सुख़ूमी में सितम्बर के मध्य तक ठहरना होगा। माँ ने अल्योशा तथा ओल्गा के स्कूलों में सीधे ही, पहले से टेलीफ़ोन करके यह विश्वास दिला दिया था कि वे अपने-अपने पाठों में क्लास के साथ मिल जाएंगे। और यह कि वे घर लौटते समय ओदेसा तक आश्चर्यजनक जहाज "उक्रइना" में जाएंगे और इसके बाद मास्को तक रेल-गाड़ी में। दूसरे शब्दों में गर्मी की छुट्टियों का छोटा-सा भाग जो पहले से ही दिनों में गिना जा चुका था, अकस्मात ही मोर की दुम के आकर्षक रंगों की भाँति फैल गया। और मीत्या भी यह सुनकर ख़ुश होगा, क्योंकि उसे भी अभी एक महीना-भर और ठहरना था। उसके माता-पिता ने तीन वर्षों के बाद अपनी पहली छुट्टियाँ ली थीं। रास्ता तय करने में ही उन्हें एक महीना लग गया था और मीत्या के पिता ने चलने के पूर्व ही मीत्या के स्कूल के हैडमास्टर से उसके एक महीना देर से लौटने की व्यवस्था कर ली थी। ऐसा करना कुछ कठिन न था, क्योंकि मीत्या अपनी श्रेणी में चोटी का विद्यार्थी था।

तभी बातचीत और पाँवों की आहट सुनाई दी। आहट सुनाई देती रही और आवाज़ अपरिचित सी लगी। माँ ने अपना सिर हिलाया और

धीमे तथा चिन्तित स्वर में, जैसे कि वह बातचीत का सिलसिला जारी रख रही हो, कहा :

"आख़िर, उस समय मेरी उम्र केवल अठारह वर्ष की ही तो थी, जब मैं तुम्हारे पिता से मिली थी।"

अल्योशा की यह हार्दिक इच्छा थी कि वह ही सब से पहले ओल्गा को उनके वहाँ रुके रहने का समाचार तथा माँ के सुधारों के बारे में बताकर अपना रौब गाँठे, किन्तु वह उसके घर लौटने की प्रतीक्षा करते-करते ही सो गया। अगली सुबह जब वह उठा तो उसे पता चला कि ओल्गा को सब कुछ मालूम हो चुका था। अल्योशा का ख़्याल था कि उसका ओल्गा के प्रभुत्व से निकल भागना उसे खलेगा; लेकिन ओल्गा ने स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि यद्यपि अल्योशा को साधारण नियमों के अनुसार सिनेमा में जाने से रोक दिया गया था, तथापि माँ को पहले से ही उसमें पूरा विश्वास हो चुका था। उस सुबह से ही ओल्गा ने उसके प्रति अपना व्यवहार बदल दिया। उसने उसे कहा :

"अल्योशा प्रिय, क्या तुम बाहर बरामदे में जाने की तकलीफ़ गवारा करोगे, मैं यहाँ से फ़र्श धोना चाहती हूं," और एक अपराधी की भाँति उसने माँ की ओर देखा।

यह ज़ाहिर था कि माँ ने आख़िर, ओल्गा को यह समझा दिया था कि उसे अपने भाई के साथ केसा व्यवहार करना चाहिए। उस दिन तो ओल्गा जैसे दिन-भर थकी ही नहीं। जब सन्ध्या को माँ काम से लौटी तो उसने कपड़े धुले तथा इस्त्री किए हुए, फ़र्श धोया हुआ, अल्योशा की

कमीज़ों को टाँके लगे हुए, और रात का खाना पका हुआ पाया। ओल्गा दिन-भर बड़ी नम्रता से बोलती रही –"अल्योशा, क्या कृपया मेरी ख़ातिर मांस का कीमा बना दोगे।" "अल्योशा, मेहरबानी करके मुझे थोड़ा-सा पानी ला दो।" –और उसने खुशी-खुशी उसकी मदद की। नर्मी से कहने पर भला वह उसकी मदद क्यों नहीं करेगा? वह कभी भी आवारा नहीं रहा था।

किन्तु सन्ध्या समय ओल्गा मीत्या के साथ फिर सिनेमा देखने गई। इस बार इन्हें जाने में देर नहीं हुई, लेकिन वे जान-बूझकर आठ बजे वाले शो में गए। हाँ, और वह शीघ्र ही घर वापस आ गई। वह अल्योशा के बिस्तर के समीप आई। उसने उसका आलिंगन किया और चुम्बन लिया तथा कहा – "सो जाओ, नन्हे"। कुछ कारणवश उसे नन्हा कह कर पुकारा जाना तनिक भी बुरा नहीं लगा। तब वह खिड़की के समीप माँ के पास जा बैठी और अपना सिर माँ के कंधे पर रख कर देर तक कानाफूसी करती रही। अल्योशा उनकी फुसफुस की आवाज़ सुनता-सुनता ही सो गया।

अगस्त के अन्तिम दिन अल्योशा ने एकान्त में ही गुज़ारे। अलबत्ता, यदि गर्मी के आरम्भ से अल्योशा ने अपना सारा समय ओल्गा के पीछे घूम-घूम कर न गुज़ारा होता तो उसे स्थानीय लड़कों से मित्रता करने का समय मिल जाता और वह फुटबॉल की टीम में भी शामिल हो गया होता। किन्तु उसे इसका समय ही नहीं मिला था और इसके अतिरिक्त मित्रता के सम्बन्ध में उसके विचार ओल्गा से, जो प्रतिदिन एक नया मित्र बना

लेती थी, भिन्न थे। अल्योशा, बिना जल्दी किए, गम्भीरतापूर्ण तथा उचित परख के बाद अपने मित्र चुनता था और हर बार उसकी मित्रता स्थायी तथा पुरुषों की भाँति दृढ़ होती थी। केवल मीत्या के साथ ही उसने तात्कालिक मित्रता का निर्णय किया था, और वह बीच में ही टूट गई, सम्भवतः इसलिए कि मीत्या उससे उम्र में बहुत बड़ा था। उसकी माँ ने उसे यह कह कर सान्त्वना दी थी कि उनके बड़े हो जाने पर आयु की असमानता समाप्त हो जाएगी और जब अल्योशा पच्चीस वर्ष का होगा तथा मीत्या तीस वर्ष का, उस समय आयु का कोई अन्तर न होगा, अलबत्ता यदि अल्योशा ने 25 वर्ष की आयु तक अपने को किसी योग्य बना लिया , अन्यथा नहीं। जहाँ तक मीत्या का सम्बन्ध था माँ का विचार था कि वह एक बहुत उत्तम व्यक्ति बनेगा। अल्योशा ने निर्णय किया कि वह पाँच वर्षों के अन्तर में अपने को किसी योग्य अवश्य बना लेगा। इस विचार ने उसके मन को गुदगुदा दिया।

ओल्गा ने उसे केकड़े के उपनाम से पुकारना बिल्कुल बन्द कर दिया और केवल कभी-कभी ही वह उसे 'बड़ा, भद्दा केकड़ा' कहकर बुलाती थी। उसके इस सम्बोधन में भी एक अजीब तथा लाड़ से भरी ध्वनि रहती थी और इससे अल्योशा के हृदय पर किसी भाँति चोट न लगती थी। ओल्गा उसकी कमीज़ों पर इस्त्री करती और उसे जेब में रखने वाली टार्च तक भी दे देती थी। संक्षेप में अल्योशा एक बड़ी बहन के अस्तित्व को स्वीकार करके उसका अत्यधिक वफ़ादार मित्र बनने वाला ही था जब सहसा ओल्गा ने एक विश्वासघात कर डाला। निःसन्देह, विश्वासघात,

अन्य किन्हीं शब्दों से इसे व्यक्त नहीं किया जा सकता! विश्वासघात...

प्रथम सितम्बर को वे भाप-चालित नौका द्वारा भ्रमण के लिए जाने वाले थे। ओल्गा ने साथ ले जाने के लिए कुछ विशेष बिस्कुट बनाने शुरू किए और अल्योशा को किसी निरर्थक कार्य से बाहर भेज दिया। किन्तु जब वह लौटा तो उसे न तो ओल्गा मिली और न ही चिर प्रतीक्षित बिस्कुट। मेज़ पर एक पुर्ज़ा पड़ा था जिसमें लिखा था – "लड़को, मैंने स्कूल जाने का निर्णय कर लिया है। हम भ्रमण के लिए रविवार को चलेंगे। आज स्कूल के बाद हम तैरने के लिए जाएँगे। खुश रहो, ओल्गा।" चन्द मिनट बाद मीत्या भी सज-धज कर वहाँ आ पहुँचा। उसकी नीली क़मीज़ पर बिलकुल ताज़ा-ताज़ा इस्त्री फिरी हुई थी। उसकी माँ –अन्ना पेतरोवना –भी उन्हें विदा करने और चलते समय उनके लम्बे सफ़र के लिए कुछ शिक्षा देने के लिए साथ आई थी। मीत्या एक ही बार में उस पुर्ज़े को पढ़ गया और उसके चेहरे पर अत्यधिक व्यग्रता के चिह्न उभर आए। "मैं नहीं समझ सकता कि उसने ऐसा क्यों किया!" उसने कंधे सिकोड़ते हुए कहा।

"मुझे दिखाओ," मीत्या के कंधे पर से अन्ना पेतरोवना ने उस पुर्ज़े को पढ़ा – "क्या अद्भुत कर्त्तव्यपरायणता है!" उन्होंने प्रशंसा करते हुए कहा।" मीत्या, तुम देखते हो, कि कैसे तुमसे छोटी आयु की एक लड़की ने स्कूल जाने का मार्ग खोज निकाला। और इधर एक मैं हूँ जो तुम्हारे स्कूल छूट जाने के सम्बन्ध में चिन्तित रहती हूँ। तुम कल यहाँ

स्कूल जाओगे और हैडमास्टर से अस्थायी तौर पर दाख़िल कर लेने के लिए कहोगे।"

"नहीं," मीत्या ने साफ़ तौर पर इन्कार कर दिया। "हरेक के जीवन में कुछ ऐसे दिन आते हैं, जिन्हें दुबारा लौटाया नहीं जा सकता। आप भली भाँति जानती ही हैं कि मैं सभी विषयों में अपनी कमी पूरी कर लूंगा।"

"जो मैं भली भाँति जानती हूँ, वह यह है कि तुम कितने अधिक ज़िद्दी हो।" अन्ना पेतरोवना ने नाराज़ होते हुए कहा – "अच्छा, जो मन माने वही करो।"

उनके जाने के बाद लड़कों ने एक-दूसरे की ओर देखा। मीत्या ने दृढ़ता से कहा –

"मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि अभी सब क़िस्सा निपटा डालूंगा।"

उस क्षण वे दोनों कुछ ऐसा ही अनुभव कर रहे थे। अल्योशा यह साफ़ तौर पर देख रहा था कि ओल्गा का वह व्यवहार, माँ को उसके भविष्य के सम्बन्ध में एक स्पष्ट निश्चय पर पहुँचा देगा। इसी कारण वह बेहद शौक से अपनी खिड़की में खड़ा होकर मीत्या को सड़क पार कर स्कूल के सामने इधर-से-उधर टहलते हुए देखने लगा। उसने ओल्गा को काला फ़्राक पहने, खुशी-खुशी दौड़ कर स्कूल से बाहर आते और जल्दी-जल्दी मीत्या को कुछ बताते हुए देखा। पाठ के बीच की कुल छुट्टी में वे दोनों बातें करते रहे। अल्योशा को मीत्या का मुख दिखाई नहीं दे रहा था। किन्तु उसने ओल्गा को उदास से उदासतर होते देखा। वह पूरी

शक्ति से किसी बात को सिद्ध करने में लगी थी और जैसा कि ज़ाहिर था ऐसा करते हुए वह इस बात से भी अनभिज्ञ थी कि लड़कियों की एक भारी भीड़ उनके चारों ओर इकट्ठी हो गई थी तथा वे अपनी काली-काली आँखों से उन्हें जिज्ञासा से देख रही थीं। तब वह जल्दी से अपनी एड़ियों के सहारे पीछे की ओर मुड़ी और तेज़ी से स्कूल के आँगन की तरफ़ दौड़ गई। मीत्या विवाद और क्रोध से भरपूर फिर से कमरे में प्रकट हुआ।

"तुम्हारी बहन पागल हो गई है," उसने अल्योशा को सूचित किया – "तुम जानते हो कि हुआ क्या, उसने अपनी खिड़की से बाहर झाँका तो लड़कियों को अपनी अध्यापिकाओं को भेंट करने की ख़ातिर फूलों के गुलदस्ते लिए स्कूल की ओर दौड़ते हुए पाया। उसे उनके सौभाग्य पर ईर्ष्या हुई और यह निर्णय कर लिया कि सुख़ूमी में सब से मनोरंजक तथा करने योग्य कार्य सुख़ूमी-स्कूल में जाना था।"

अल्योशा ने दुखी होकर गहरी साँस ली। मीत्या जाने के लिए उठ खड़ा हुआ।

"मुझे मेहनती क़िस्म की और वे लड़कियाँ जो अपने से बड़ों को काम करने का अवसर देने में विश्वास रखती हों, तथा जो प्रश्नों को हल करने को ही, समय बिताने का सब से मनोरंजक साधन मानती हों, तनिक अच्छी नहीं लगतीं।" उसने थोड़ा ठहर कर कहा – "हाँ, मेरे प्रिय साथी, उसने हमारे साथ बहुत ही घृणित व्यवहार किया है। ख़ैर, आओ चलकर तैरें। मैं फिर कभी तुम्हारे घर नहीं आऊँगा। मैं अस्थिर मन रखने वाले

मित्रों की तनिक परवाह नहीं करता। आज से हम दोनों समुद्र-तट पर मिला करेंगे।"

समुद्र-तट कभी इतना सूना नहीं रहता था जितना कि वह प्रथम सितम्बर के दिन था ... वहाँ केवल कुछ प्रौढ़ तथा छोटे बच्चे थे। और यह तनिक भी महत्वपूर्ण नहीं था कि वे कितनी दूर तक समुद्र में तैरे अथवा उन्होंने कितनी गहराई तक डुबकी लगाई , क्योंकि किसी ने उनकी तरफ़ ज़रा-सा भी ध्यान नहीं दिया। उनका ख़्याल था कि वे कम-से-कम तीन बजे तक वहाँ रहे थे। किन्तु जब वे घर लौटते हुए स्कूल के पास से गुज़रे, घण्टी बजी और लड़कों की एक भीड़ आँगन में आकर इकट्ठी हो गई।

"आधी छुट्टी," मीत्या ने कहा।

लड़के आँगन में कोई ऐसा खेल खेल रहे थे जो मीत्या तथा अल्योशा दोनों के लिए नया था। बाड़ में से झाँक कर इस खेल के सम्बन्ध में बहुत कुछ बताना कठिन था क्योंकि बाड़, बेल-बूटों से ढकी हुई थी, किन्तु उन्होंने आँगन में जाना उचित नहीं समझा।

ओल्गा जब स्कूल से आई तो बहुत खुश-खुश तथा उत्तेजित दिखाई दे रही थी। खास बात यह थी कि वह माँ का चमड़े वाला बड़ा सूट केस उठाए हुए थी। उसने अल्योशा की ओर प्रश्न सूचक दृष्टि से देखा। चिढ़ाने के लिए अल्योशा ने उसे बताया कि तैरने में उन्हें कितना अधिक मज़ा आया था।

"कम-से-कम तुम, अभी यह जानने के लिए बहुत छोटे हो..." उसने

शुरू किया। तभी उसने अपनी विचारधारा को बदल दिया – "और हमारी भूगोल की अध्यापिका तो अद्भुत सुन्दरी है, उसके बाल इतने लम्बे हैं!" और ओल्गा ने अपने हाथ से घुटनों के नीचे तक छू दिया।

"ओल्गा, ओल्गा!" खिड़की के बाहर से आवाज़ें सुनाई दीं।

और ओल्गा झटपट अपना तौलिया सम्भाल कर अपनी नई सहेलियों के साथ समुद्र-तट की ओर दौड़ गई। सन्ध्या को इन्हीं लड़कियों के साथ उसने स्कूल का काम किया।

अगले रोज़ अल्योशा तथा मीत्या फिर समुद्र-तट पर मिले। और इस तरह यह क्रम चलता रहा।

ओल्गा प्रफुल्लचित्त, खुश तथा सन्तुष्ट दिखाई देती थी। वह समुद्र-स्नान तथा सिनेमा जाने के लिए समय निकाल लेती थी और उसने कई नए और आकर्षक आब्ख़ाज़ी गाने भी सीख लिए थे। किन्तु एक रात कानाफूसी से अल्योशा की नींद उचट गई।

कमरे में चाँदनी छिटकी हुई थी। अल्योशा ने ओल्गा का चमकता हुआ सिर तथा माँ का भूरा हाथ देखा जोकि उस सुन्दर सिर को धीरे-धीरे थपथपा रहा था।

"मेरा ख़्याल था कि वह सचमुच ही बहुत भला है," उसने दया का भाव दिखाते हुए फुसफुसाया – "मैं सोचती थी कि वह हर बात में मुझपर विश्वास करता है ... मेरे विचार में आप मेरा मतलब समझती हैं ? अगर वह स्कूल नहीं जाना चाहता तो यह उसका अपना मामला है। किन्तु इसके लिए मुझसे झगड़ा क्यों? उसने मुझसे कहा – 'तुम ढोंगी और नीरस

हो।' किन्तु मुझे स्कूल जाने में बहुत आनन्द मिलता है। सचमुच, बड़ा मज़ा आता है।"

"सब ठीक-ठाक हो जाएगा," माँ फुसफुसाई – "वह सचमुच ही बहुत भला है। अभी वह बहुत छोटा है। बहुत जल्द तेज़ी में आ जाने वाला छोकरा है।"

"मैं भी तो बहुत छोटी हूँ," ओल्गा ने कहा – "इससे कोई मतलब हल नहीं होता। उदाहरण के लिए कहा जा सकता है कि अल्योशा भी उसी की भाँति आवारा बनेगा, वह भी इसी भाँति लोगों की भावनाओं को ठेस पहुँचाएगा और इस तरह कभी कोई लड़की इस से प्यार नहीं करेगी।"

माँ इसके जवाब में केवल हँस भर दी। अगली सुबह अल्योशा कुछ व्यथित-सा मन लिए नींद से जगा। आज तक उसने कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया था कि क्या वह चाहता है कि कोई लड़की उससे प्रेम करे, अथवा नहीं। शायद उसके लिए तो ओल्गा का आदेश मात्र ही ऐसा करने के लिए काफ़ी था।

मीत्या समुद्र-तट पर नहीं आया। यह उसकी ओर से बेवफ़ाई थी क्योंकि उसे मालूम था कि उसके बिना उसे पानी में जाने की इजाज़त नहीं थी। वह घर पर भी नहीं था। घर की ओर लौटते हुए अल्योशा स्कूल की एक खुली खिड़की के नीचे थोड़ी देर के लिए रुक गया। एक लड़का एक लोक-कथा "कौआ और लोमड़ी" का पाठ कर रहा था। अल्योशा के लिए भी उसका उतने ही अच्छे ढंग से पाठ करना सम्भव हो सकता था। स्कूल की घण्टी बजी और सहसा ही मीत्या उसके सामने आकर

खड़ा हो गया।

"आओ, मेरे साथ," मीत्या ने कहा – "मैं तुम्हारे सम्बन्ध में पहले से ही बात कर चुका हूँ। उन्हें बता चुका हूँ कि तुम भी आओगे। किन्तु अल्योशा एक पायनियर की भाँति वचन दो कि तुम अपनी दीदी को यह नहीं बताओगे ... मेरे माता-पिता को भी यह मालूम नहीं कि मैंने स्कूल जाना शुरू कर दिया है।"

"क्यों?" अल्योशा की समझ में यह बात नहीं आई।"

"वे यह सोचेंगे कि मैंने उसके कारण ऐसा किया है," मीत्या ने खिन्न मन से समझाया – "किन्तु इसका उससे कोई सम्बन्ध नहीं, यह मेरा अपना ख़्याल था। मैं आवारागर्दी से तंग आ गया हूँ। खैर, जैसे भी है, तुम्हारी बहन तो किसी के चरित्र को जाँचने की बहुत क्षमता रखती नहीं।"

उस दिन के बाद प्रतिदिन सुबह ही अल्योशा मीत्या को बुलाने जाता और वे दोनों इकट्ठे स्कूल जाते। मीत्या, मिलकर चलने का अभ्यास करने वाले सैनिक की भाँति लम्बे-लम्बे डग भरता, तनकर और साहसपूर्ण ढंग से चलता और उसके पीछे-पीछे क़दरे झुका-सा, घिसटता हुआ अल्योशा जाता। कोई इसे किसी भी दृष्टिकोण से क्यों न देखे यह सब झंझट बिल्कुल अनावश्यक था। चन्द हफ़्ते स्कूल जाए बिना रहा जा सकता था।

ओल्गा दिन को हँसती गाती और रात्रि के समय माँ से कानाफूसी करती। वह पहले की अपेक्षा दुबली लगती थी। मुंह उतर गया था और आँखें पहले से भी बड़ी और इतनी अधिक हरी हो गई थीं कि ऐसा लगता था मानो वे समुद्र के पानी से धोई गई हैं।

विदा लेने के दिन उसने अचानक ही अपना सब से सुन्दर फ़्राक पहन लिया। उसने अपने बाल संवारने में बहुत-सा समय लगाया, और अल्योशा को अपने साथ सिनेमा आने को कहा। अल्योशा समझ गया कि उस दिन उसे उसकी आवश्यकता थी। वह अपनी दीदी के पीछ-पीछे कुछ ऐसा अनुभव करता हुआ चल रहा था, मानो किसी अनिष्ट से उसकी रक्षा कर रहा हो। और जब वह सिनेमा के पास से बिना एक नज़र डाले ही चली गई, तब भी अल्योशा चुप रहा।

बड़ी सड़क पर इन्हें मीत्या मिला। वह फूलों से लदे वृक्षों के एक समूह के नीचे रुक गया और उसने एक प्रश्नसूचक मुस्कान के साथ उनकी ओर देखा। ओल्गा ने तनिक-सा अपना सिर झुकाया और जल्दी से आगे निकल गई। अल्योशा, मीत्या से बात करने वाला ही था, किन्तु तब तक ओल्गा बहुत दूर जा पहुँची। वह उसके साथ जा मिला और उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। ओल्गा उसकी तरफ़ नहीं देख रही थी और उसने नीचे से देखा कि उसकी धूप-जली ठोड़ी काँप रही थी और उसके धुंघराले बाल पीतल की बारीक तारों की भाँति इधर-उधर बिखर रहे थे।

अगली सुबह उन्हें अपनी खिड़की के पास रखा हुआ गुलाब के फूलों का बड़ा-सा गुलदस्ता मिला। ओल्गा ने फूलों में अपना मुँह छिपा लिया तथा खिड़की से दूर हट गई। किन्तु माँ उसे अकेला ही छोड़कर सामान बाँधने के काम में लगी रही। अल्योशा भी सामान बाँधने में लगा हुआ था और ऐसा ज़ाहिर कर रहा था मानो वह ओल्गा की आहें सुन ही नहीं रहा था। और जब उनका बन्दरगाह की ओर चलने का समय हो गया,

केवल उस समय ही उसने गुलाब के फूलों को चुपचाप लपेटने में तथा पंजों के बल खड़े होकर कोट पहनने में उसकी मदद की।

वह अपने जहाज़ को भली भाँति देख भी नहीं पाया क्योंकि ओल्गा तत्काल ही भीड़ में खो गई थी। आख़िर उसने उसे सब से ऊपर वाले डेक पर पाया। वह लोहे के जंगले का सहारा लेकर वहाँ खड़ी हुई समुद्र-तट को ताक रही थी। वह हताश होकर बुरी तरह रोती हुई गुस्से में अपनी मुट्ठी से आँसुओं को पोंछ रही थी। तेज़ हवा के झोंकों ने उसके बालों को इधर-उधर बिखरा दिया था, किन्तु इसने उन्हें समेटा नहीं था। उसे अपनी बहन को बचाना था। आख़िर, एक पायनीयर का वचन उसे उस समय तो बाँधने वाला नहीं माना जा सकता, जब वह एक बार उस तट से दूर चला गया हो, जहाँ वह वचन दिया गया था।

"मुझे स्कूल छोड़ने का बहुत दुख है," उसने कोई भाव व्यक्त किये बिना ही कहा – "मुझे वह अच्छा लगने लगा था। वहाँ भले बच्चे थे। वे लड़ने में भी बड़े तेज़ थे।"

ओल्गा ने ज़ोर-ज़ोर से रोना बन्द कर दिया – ऐसा लगा, मानो वह सुस्ता रही थी।

"और मीत्या," अल्योशा का तो लगभग दम टूट गया। उसने पायनीयर के तौर पर दिया हुआ वचन कभी नहीं तोड़ा था और अपने जीवन में पहली बार ही वह एक डूबते व्यक्ति को भी बचा रहा था – "और मीत्या वह तो कभी का क्लास में प्रथम स्थान प्राप्त कर चुका है तथा वह स्कूल के सब से बलवान तीन लड़कों को भी पीट चुका है।

कल वह पायनीयरों की सभा में उत्तरीय ध्रुव के समीपवर्ती प्रदेशों के सम्बन्ध में एक विवरण पेश करनेवाला है।" "डूबते हुए व्यक्ति ने" साँस लेनी आरम्भ की, यह ठीक है कुछ रुक-रुक कर तथा उखड़े-उखड़े ढंग से, किन्तु उसने साँस तो लेनी शुरू की – "और मीत्या मास्को में अपनी पढ़ाई जारी रखेगा।"

अल्योशा ने मुक्ति की साँस ली – "भगवान का शुक्र है अब कम-से-कम बिलबिलाना तो बन्द हो जाएगा।" किन्तु उसका ऐसा सोचना ग़लत था। ज़ोर-ज़ोर से रोने की बारी तो अभी आई थी। ओल्गा अब सुबक-सुबक कर ऊँचे स्वर में रोने लगी। उसने अल्योशा को अपनी बाँहों में ले लिया, दूर होते हुए समुद्र-तट को रुमाल हिलाकर विदा-संकेत किया और मुस्कराई। तब फिर वह इतनी शीघ्रता से ग़ायब हुई कि फिर अल्योशा की नज़र उसे खोजने में असफल थी। वह तब तक जहाज़ के मार्गों से परिचित नहीं था और उसने कई घण्टों तक फिर ओल्गा को नहीं देखा। वह एक खिड़की के सामने एक ऊँची डेस्क, जिसपर 'डाकखाना' का चिह्न बना था, से सट कर खड़ी हुई कुछ लिख रही थी। उसके पीछे एक तरुण जहाज़रान खड़ा था। वह ओल्गा को प्रशंसा की दृष्टि से देख रहा था और ओल्गा के हाथ से लिखे जा रहे काग़ज़ों के बढ़ते हुए पुलिन्दे के प्रति अपनी ईर्ष्या व्यक्त कर रहा था।

अल्योशा ने अकस्मात ही सुख की साँस ली। आख़िरकार वह फिर एक बार स्वयं अपना स्वामी था। वह बाहर डेक पर चला गया। सुख़ूमी नज़रों से ओझल हो चुका था और अब केवल यह अनुमान ही लगाया

जा सकता था कि होटल, स्कूल तथा ताड़ के वृक्ष कहाँ थे, अब वहाँ सम्भवतः स्कूल की घण्टी बज रही थी, मास्को में भी ऐसा ही था। जहाज़ अब तेज़ रफ़्तार से जा रहा था। समुद्री पक्षी उसके पीछे दौड़ते थे किन्तु थककर लहरों की ऊपरी सतह पर गिर पड़े थे। और लहरें अपने फेन सहित जहाज़ के साथ-साथ चल रही थीं। वे एक दूसरे के ऊपर इस तरह गिर रही थीं मानो कोई समुद्र तट पर खड़ा हुआ उदारतापूर्वक तथा दुखी मन से जहाज़ के मार्ग में अंजलियाँ भर-भर सफ़ेद तथा कोमल फूल गिरा रहा हो।

कामगार प्रकाशन

हिन्दी साहित्य

1.	शंकर शैलेन्द्र : न्यौता और चुनौती	Rs. 50/-
2.	अलैक्जेण्डर कुप्रिन : भयंकर लांछन (कहानी)	Rs. 20/-
3.	अलैक्जेण्डर कुप्रिन : दलदल (कहानी)	Rs. 20/-
4.	मक्सिम गोर्की : माँ का हृदय (कहानी)	Rs. 15/-
5.	नाजिम हिकमत : हाथ (कविता संग्रह)	Rs. 20/-
6.	नाजिम हिकमत : तुम्हारे हाथ चित्रांकन मारिन स्काट	Rs. 15/-
7.	क्लारा ज़ेटकिन : लेनिन के संस्मरण	Rs. 100/-
8.	अर्कादी गैदार : चूक और गेक	Rs. 100/-
9.	हावर्ड फास्ट : साहित्य और यथार्थ	Rs. 150/-
10.	आन्द्रेई ज्दानोव : साहित्य, संगीत और दर्शन	Rs. 150/-
11.	इवान तुर्गनेव : पिता और पुत्र	Rs. 250/-
12.	इवान तुर्गनेव : शिकारी के शब्द चित्र	Rs. 450/-
13.	इवान तुर्गनेव : रूदिन	Rs. 270/-
14.	बोरीस पोलेवोय : असली इंसान	Rs. 350/-
15.	चंगीज़ आईत्मातोव : ज़मीला	Rs. 180/-
16.	चंगीज़ आईत्मातोव : अलविदा, गुलसारी !	Rs. 220/-
17.	फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की : दरिद्र नारायण - रजत रातें	Rs. 250/-
18.	लेफ़ तलस्तोय : पुनरुत्थान	Rs. 550/-
19.	लेफ़ तलस्तोय : आन्ना करेनिना (भाग 1-4) पेपरबैक	Rs. 550/-
20.	लेफ़ तलस्तोय : आन्ना करेनिना (भाग 5-8) पेपरबैक	Rs. 550/-
21.	लेफ़ तलस्तोय : आन्ना करेनिना (भाग 1-4) सजिल्द	Rs. 700/-
22.	लेफ़ तलस्तोय : आन्ना करेनिना (भाग 5-8) सजिल्द	Rs. 700/-

येलेना उस्पेंस्काया

(मार्च 16, 1916 - अगस्त 7, 1966)

इनकी रचना का विषय तरुणाई और सोवियत युवकों का जीवन है। ये तीन कहानियाँ उक्त विषयों का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनकी प्रसिद्ध रचना Our Summer विदेशी भाषा प्रकाशन गृह द्वारा 1954 में प्रकाशित की गई थी।

1. नगर का प्रथम शिशु

निकीता नगर का प्रथम शिशु कहलाता है क्योंकि वह सुदूर उत्तर के नए नगर में सबसे पहले पैदा हुआ था।

2. पिता

बारह साल हुए प्योत्र और वाल्या एक दूसरे से बिछुड़े। उस समय वे विद्यार्थी थे। वे नए सिरे से अभी-अभी मिले, और उनकी यह मुलाक़ात बड़े महत्त्व की रही।

3. दीदी

बालक तेरह साल का है, और उसकी दीदी उससे थोड़ी बड़ी है। फिर भी क्या इस आयु में बड़ी और "कठिन" समस्याएँ सामने नहीं आ सकतीं?

9 788185 242729

PRICE 100/-

कामगार प्रकाशन